फासीवाद और हर तरह के शोषण–दमन के

विरुद्ध

तृतीय अंकः मई, 2018 | केवल निजी वितरण हेतु | सहयोग राशि – 5 रूपये

सम्पादक

कृपा शंकर

विश्वविजय

परामर्श मण्डल

सुधीर विद्यार्थी

गौहर रज़ा

शम्सुल इस्लाम

अनिल चमड़िया

श्रवण

सम्पर्क सूत्र

विश्वम्भर

मुसैला चौराहा

पोस्ट– बड़हरा

जनपद– देवरिया

पिन– 274501

मो0– 8173866378

antifascistfront2018@gmail.com

blog: antifascistfront2018.blogspot.com

भागीदार संगठन

1. जन मुक्ति मोर्चा (आजमगढ़),
2. मजदूर किसान एकता मंच (उ0प्र0),
3. रिहाई मंच (उ0प्र0),
4. भगत सिंह छात्र मोर्चा (B.C.M.)(उ0प्र0)
5. इंकलाबी छात्र मोर्चा (I.C.M.)(उ0प्र0),
6. भगत सिंह विचार मंच (चन्दौली),
7. दस्तक प्रत्रिका (इलाहाबाद),
8. S.F.C.(U.P.), 9. D.S.A.(U.P.)
10. बुनकर बिरादराना तंज़ीम(52वीं व 14वीं) (वाराणसी),
11. भगत सिंह अम्बेडकर विचार मंच (वाराणसी),
12. आजमगढ़ जन शिक्षा अधिकार मंच,
13. स्ववित्तपोषित महाविद्यालय शिक्षक संघ (उ0प्र0),
14. अम्बेडकरवादी बहुजन समाज संगठन (गोरखपुर),
15. राष्ट्रीय मुस्लिम मोर्चा (उ0प्र0),
16. डा0 अम्बेडकर संघर्ष समिति (उ0प्र0),
17. पूर्वांचल छात्र संगठन (आजमगढ़),
18. जाति उन्मूलन मोर्चा (उ0प्र0)
19. ग्राम विकास मंच (बलिया),
20. जन संघर्ष समन्वय समिति (बलिया),
21. इण्डियन पीपूल्स सर्विसेज (बलिया),
22. जन कला मंच,
23. दलित अल्पसंख्यक पिछड़ा आदिवासी न्याय मंच (बलिया),
24. महिला विकास मंच (बलिया),
25. शहीद भगत सिंह डा0 अम्बेडकर मंच (गोरखपुर),
26. लोक जनवादी अधिकार मंच (गोरखपुर)
27. भीम आर्मी (उ0प्र0)
28. यंग इण्डिया स्टडी सर्किल

सम्पादकीय

देशी–विदेशी कारपोरेटों की चाटुकारिता और आम जनता पर फासीवादी हमलों के 4 वर्ष।

अब मोदी सरकार पूरी तरह चुनावी मोड में आ चुकी है। और अपने चिर परिचित एंजेडे को उठाने लगी है। यह एजेण्डा है हिन्दुत्व के नाम पर अल्पसंख्यकों विशेषकर मुस्लिमों के खिलाफ हिन्दुओं का ध्रुवीकरण। यहां मैं प्रसिद्ध बुद्धिजीवी सामिर अमीन का इस्लामी फण्डामेंटलिस्टों तालिबान, ब्रदरहुड के संदर्भ में कही बात का उल्लेख करना चाहूंगा कि यह विशुद्ध राजनीति है, इसका धर्म से कोई लेना–देना नहीं है। उसी प्रकार हमारे देश में हिन्दुत्व विशुद्ध राजनीति है। इसका हिन्दू धर्म से कोई लेना–देना नहीं है। अमित शाह ने अपने कार्यकर्त्ताओं (मूलतः ये गुण्डा गिरोह हैं।) को 'अखलाक करने' का आह्वान किया है कि 'अखलाक होने' से ही वे जीतेंगे।

पिछले 4 वर्षों से अधिक शासन से आम जनता का मोह मोदी से हट गया है। एक–एक कर इसके कूकर्म खूलते जा रहे हैं। अब आम जनता का भ्रम भी टूट रहा है कि आरएसएस की अगुआयी वाली इस हजार मुखी भाजपा गिरोह का असली काम तो देश के अम्बानी–अडाणी–बिरला के नेतृत्व वाली वर्णवर्चस्ववाली चंद कारपोरेटों व उनके साम्राज्यवादी आकाओं अमरीकी नीत गिरोहों के आगे देश की समस्त प्राकृतिक धनसंपदाओं सहित मानवीय संपदाओं को चारे के रूप में सौंप देना है। ''देशभक्ति'', ''हिन्दुत्व पर खतरे'', ''राष्ट्रीय सुरक्षा पर खतरा'', ''गौ–रक्षा'', ''आतंकवाद'' इत्यादि तो मात्र भ्रमित करने के साधन हैं।

2011 से 2014 के आम चुनाव तक तत्कालिन मनमोहन सरकार के खिलाफ जिन मामलों पर जन उभार खड़ा हुआ था। आज मोदी सरकार ने उन सभी मामलों में पिछली यूपीए सरकार को मात देकर जनता की बरबादी को बढ़ा दिया है। परन्तु ज्यादातर बड़ी मीडिया अम्बानियों–मोदियों की गोदी में समाना पसंद किया है। अण्णा हजारे मोदी के हाथ सत्ता सौंपवाकर सन्यासी बन गया है। चुनावी विपक्ष एक बड़े फासिस्ट के आगे लाचार नजर आ रही है। बावजूद इसके आरएसएस व भाजपा सहित मोदी की कुर्सी हिलने लगी है। क्योंकि विकास के बारे में उसके झूठ का पर्दाफाश खुद सरकारी संस्थाएं कर रहीं हैं। यहां हम कुछ झूठ को देखेंगे।

नोटबंदी का झूठ

बड़े जोर–शोर से मोदी ने नोटबंदी का प्रचार मीडिया, अपने तंत्रों से कराया। जनता को कालाधन लाने का सपना दिखाया, कष्ट सहने को कहा। करीब 150 लोग बैंकों के आगे लाइनों में मर गये। छोटे–मध्यम कारोबार ध्वस्त हो गये। दैनिक मजदूरी का काम तबाह हो गया। मोदी ने गला फाड़–फाड़ कर देश से 50 दिन मांगा था। अब लगभग 2 वर्ष बाद रिजर्व बैंक ने नोटों की गिनती करके बताया है कि 99.3 फिसदी नोट वापस आ गये हैं। लगभग 15 लाख करोड़ रुपये मूल्य के 500–1000 के नोटों में से मात्र 10000 करोड़ रुपये ही वापस नहीं आ पाये हैं। इसमें भी अभी कुछ नोट नेपाल में व अन्य जगह फंसे पड़े हैं। तो सवाल उठता है कि लगभग 4लाख करोड़ रुपये के काले धन का दावा कहां गया? मोदी ने आम जनता सहित देश की अर्थव्यवस्था का गम्भीर नुकसान किया है। यह काम उसने अम्बानियों, अडाणियों की वफादारी में किया था। एक तो कैशलेश के बहाने उनके बिजीनेस को बढ़ाया और दूसरे देश के पूरे रुपये को इनके पहुंच में लाया। मोदी और उसके गिरोह को इसका खामियाजा भुगतना पड़ेगा।

आम जनता पर मंहगाई की मार

सत्ता में आने के पहले यही भाजपा गिरोह सिलिण्डर की शव यात्रा निकालते थे, बड़े–बड़े नेता साइकिल चलाने लगे थे कि पेट्रोल के दाम बढ़े थे। रुपये के अवमूल्यन पर मोदी और उसके गिरोह के बयानों को याद कीजिए। उस वक्त की गोदी मीडिया को याद कीजिए। और आज घरेलू गैस की कीमत 900 रुपये के पार पहुंच गया है, पेट्रोल 80 को पार करते हुए कहीं–कहीं 90 रुपये प्रति लीटर को छूने लगा है और रुपया 73 तक गिर गया है। इस मंहगाई जब नौकरी पेशा वर्ग बदहाल होने लगा है तो आम आदमी के हालत की कल्पना कीजिए। फेंकू और गोदी मीडिया की चुप्पी तो समझ में आती है। इसके खिलाफ संघर्ष की उम्मीद संसदीय विपक्ष से करना तो इसी दलदल में फंसे रहना है। अब तो जनता का क्रांतिकारी आंदोलन ही एक मजबूत विकल्प बन सकता है।

जनता का धन एनपीए के नाम पर कारपोरेट घराने को स्थानांतरित

हम सभी जानते हैं कि बैंकों में आम जनता अपना धन जमा करती है। जिसे कर्ज के नाम पर लेकर कारपोरेट बिजीनेस खड़ा करते हैं। कारपोरेट वफादारी में लगी सरकारें ऐसी व्यवस्था करती हैं कि आम जनता विशेषकर किसानों को बैंकों से कर्ज न मिल पाये। और जो मिलता है उसकी वसूली की प्रक्रिया में उसे जेल तक जाने पड़ते हैं। हर ब्लाकों पर कर्जदारों की सूची बोर्डों पर लिख दिया जाता है। कर्ज लेने की प्रक्रिया में किसान को कागजों वगैरह, कमीशन की व्यवस्था करनी पड़ती है। अभी तो केसीसी के माध्यम से मिलने वाले कर्ज में एक नियम सा बन गया है कि किसान को 10 फीसदी घूस देना ही है।

इसके बरक्स आप इस 'नॉन परफार्मिंग एसेट यानी एनपीए' को लीजिए। कारपोरेटों को बैंकों में जमा जनता के धन को उधार दे दो और जब वह न दे पाये तो एनपीए खाते में डाल दो। अब तक 10 लाख करोड़ रुपये के एनपीए का पता चल रहा है। इसमें मोदी की चौकीदारी में तीव्र वृद्धि हुई है। परंतु यूपीए और एनडीए दोनों इस पर हो हल्ला मचा रहे हैं कि यह कर्ज किसके शासन में दिया गया । परंतु कौन–कौन हैं यह कर्ज लेने वाले उनका नाम देश को कोई नहीं बता रहा। विजय माल्या, नीरव मोदी , मेहुल चौकसी तो महज नाम हैं। इन पर भी आपसी आरोप–प्रत्यारोप चल रहा है। ये कर्जदार इतने 'सम्मानित' हैं कि इनका नाम भी देश नहीं जान सकता।

आम जनता पर बढ़ते फासीवादी हमले और प्रतिरोध

2014 में 'प्रधानसेवक व चौकीदार' के नाम पर मोदी के प्रधानमंत्री बनने के बाद मुस्लिमों, दलित–दमित जातियों, महिलाओं, आदिवासियों सहित मजदूरों–किसानों, विद्यार्थियों, कर्मचारियों, नौजवानों, बुद्धिजीवियों पर पहले से चल रहे हमलों में अचानक वृद्धि हुई है। मंदसौर में किसानों पर गोलीबारी, तुतीकोरिन में गोलीबारी, मणिपुर–बीएचयू–जेएनयू–डीयू–एचसीयू सहित कई विश्वविद्यालयों में हमला तो महज कुछ उदाहरण हैं। गढ़चिरौली में 42 आदिवासियों की हत्या, सुकमा में 15 आदिवासियों की हत्या इस हिन्दुत्व फासीवादी राज्य का सबसे क्रूर चेहरा है। मॉबलिंचिंग के नाम पर फासिस्ट हिन्दू गुण्डों द्वारा किसी भी दलित या मुस्लिम की हत्या कर दी जा रही है। भीमा कोरेगांव में दलित समुदाय की रैली पर सवर्ण हिन्दू गुण्डों द्वारा हमला किया गया था। उनके दोषियों को पकड़ने की जगह अबै आदिवासियों–दलितों के ऊपर होने वाले हमलों का प्रतिरोध करने, जांच करने, उनके मुकदमों की पैरवी करने, उनके पक्ष में लिखने वालों के ऊपर ही हमला बोला गया है। बच्चा सिंह, चन्द्रशेखर आजाद, सुधीर

शेष पेज 7 पर.....

फिल्म समीक्षा

Survivors Guide To Prison

– आबिदा

अमरीका में जब 'डोनाल्ड ट्रम्प' की राष्ट्रपति पद पर जीत हुई तो दो कम्पनियों के शेयरों में 100 प्रतिशत का उछाल आ गया। ये कम्पनियां हैं– 'कोर सिविक' और 'जीओ ग्रुप'। ये कम्पनियां अमरीका में निजी जेलों का संचालन करती हैं। जिन्हें प्रति कैदी अमरीकी सरकार से पैसे मिलते हैं। यानी जितने ज्यादा कैदी होंगे, उतने ही इन्हें पैसे मिलेंगे। इसके अलावा वहां निजी कम्पनियां ठेके पर इन कैदियों से काम भी कराती हैं, जहां उन्हें न्यूनतम वेतन से काफी कम मजदूरी दी जाती है। डोनाल्ड ट्रम्प का अप्रवासियों, कालों और मुस्लिमों के प्रति जो रूख था, उससे इन कम्पनियों ने अनुमान लगा लिया था कि ट्रम्प के आने के बाद जेल में कैदियों की संख्या बढ़ेगी। इसलिए इन कम्पनियों ने चुनाव कैम्पेन में ट्रम्प के समर्थन में काफी पैसा बहाया।

आपको यह जानकर शायद आश्चर्य हो कि पूरी दुनिया में जितनी महिलाएं जेलों में हैं, उसका एक तिहाई अकेले अमरीका में हैं। पूरी दुनिया में जितने कैदी हैं, उसका 22 प्रतिशत अकेले अमरीका में हैं। जबकि अमरीकी आबादी दुनिया की आबादी का महज 5 प्रतिशत है। वहां की जेलों में काले और अप्रवासी लैटिन अमरीकियों की संख्या आबादी में उनके अनुपात से कहीं ज्यादा है।

इसी साल मई में अमरीकी जेलों की स्थितियों पर एक बेहद संवेदनशील फिल्म 'Survivors Guide To Prison' आयी है, जिसकी प्रगतिशील खेमे में काफी चर्चा है। एक गोरे और एक काले व्यक्ति, जिन्होंने निर्दोष होने के बावजूद सालों–साल जेल की काल–कोठरी में गुजार दी, के साक्षात्कार के माध्यम से यह फिल्म ना सिर्फ जेल की अमानवीय स्थितियों, पुलिस की निरंकुशता और कोर्ट की संवेदनहीनता और गरीबों–कालों–अप्रवासियों के प्रति उसके पक्षपात को बेहद असरदार तरीके से सामने लाती है, वरन मानवाधिकार के क्षेत्र में काम कर रहे विभिन्न बुद्धिजीवियों के साक्षात्कारों के माध्यम से जेल–स्वतंत्रता व मानव अधिकार के बारे में बेहद बुनियादी सवाल उठाती है। फिल्म के निर्देशक 'मैथ्यू कूक' और 'सूसान सरन्डन' ने बेहद असरदार तरीके से नैरेशन की भूमिका अदा की है। और बीच बीच में इस फिल्म को एक परिप्रेक्ष्य देने की कोशिश की है।

फिल्म में बताये गये इस तथ्य को जानकर बेहद आश्चर्य होता है कि अमेरिका में 95 प्रतिशत मामले 'Plea bargain' से हल किये जाते हैं। मतलब कि आरोपी से कहा जाता है कि वह अपना अपराध कबूल कर ले, तो उसे कम दण्ड दिया जायेगा। अन्यथा उसे मंहगे ट्रायल का सामना करना पड़ेगा और उसके बाद अगर वह दोषी पाया गया तो उसे कड़ी सजा दी जायेगी। इसी दबाव में मंहगे ट्रायल का खर्च ना उठा पाने वाले अधिकांश गरीब–काले व अप्रवासी वे जुर्म भी कबूल कर लेते हैं जो उन्होंने कभी किया ही नहीं होता। इसलिए अमरीकी जेलों में निर्दोष कैदियों की भरमार है। और यही कारण है कि पुलिस वहां किसी को भी गिरफ्तार करके जेल भेज देती है और उसे सजा हो जाती है। अमरीकी जेलों में कैदियों की बहुतायत का यह एक बड़ा कारण है। मानवाधिकार कार्यकर्ता और लेखिका Alexander, Michelle ने फिल्म में अपने साक्षात्कार के दौरान इसे उचित ही एक नये तरह के 'जिम क्रो' (1965 के पहले अमरीका के दक्षिणी राज्यों में काले व गोरों के लिए सार्वजनिक क्षेत्र में अलग अलग नियम होते थे। जो उनके बीच नस्लभेद को कायम रखते थे। इसकी तुलना हम भारत के गांवों में लागू होने वाली अलग अलग मनु–संहिताओं से कर सकते हैं।) की संज्ञा दी है। उन्होंने इस पर एक बेहद महत्वपूर्ण किताब भी लिखी है–'The New Jim Crow Mass Incarceration in the Age of Colorblindness'

ब्लैक एक्टिविस्ट और बहुचर्चित किताब 'Are Prisons Obsolete?' की लेखिका एंजिला डेविस का इस फिल्म का हिस्सा ना होना थोड़ा अखरता है। यदि एंजिला डेविस से इस फिल्म में साक्षात्कार लिया जाता तो वे जेलों के अस्तित्व पर ही सवाल उठाती। जिस सवाल को यह फिल्म जाने अनजाने छोड़ देती है। हालांकि फिल्म के नैरेशन की तार्किक परिणति इसी सवाल पर होती है। इस सवाल पर चर्चा होनी ही चाहिए कि जेल अपराध–सुधार के लिए है या वर्ग शासन को बनाये रखने का एक हथियार है।

डाकूमेन्टरी फिल्म होने के बावजूद यह कृत्रिम और हार्श लाइट का अत्यधिक प्रयोग करती है जो दर्शक को कभी कभी डिस–ओरियन्ट कर देता है। इसके अलावा Extreme Close Up का अत्यधिक प्रयोग भी इसकी अब्जेक्टिविटी को प्रभावित करता है। और कहीं कहीं यह किसी डरावनी फिल्म का संकेत देता है। इसके बरक्स 'जान पिल्जर' की 1974 में आयी फिल्म 'Guilty Until Proven Innocent' की याद आती है जो बेहद सामान्य तरीके से नेचुरल लाइट में शूट की गयी है और ज्यादा आब्जेक्टिव और प्रभावोत्पादक है।

भारत में इस विषय पर फिल्में काफी कम हैं। कुछ समय पहले 'के पी शशी' की फिल्म 'FABRICATED' 'शुब्रदीप चक्रवर्ती' की 2013 में आयी फिल्म 'After the Storm' और 1978 में आयी 'आनन्द पटवर्धन' की 'Prisoners of Conscience' महत्वपूर्ण फिल्में है। हालांकि ये सीधे–सीधे जेलों पर नहीं है। पहली और दूसरी फिल्म फर्जी तरीके से गिरफ्तार किये गये, विशेषकर मुस्लिमों के बारे में है तो तीसरी फिल्म राजनीतिक कैदियों के बारे में है।

'Survivors Guide To Prison' भारत के सन्दर्भ में और भी महत्वपूर्ण हो जाती है क्योकि यहां भी जेलों की स्थिति अमरीका जैसी ही है। यहां भी मुस्लिम, ईसाई, सिख दलित और आदिवासी जनसंख्या में अपने अनुपात से कहीं ज्यादा हैं। 2012 में 22.22 प्रतिशत दलित और 13.47 प्रतिशत आदिवासी तथा 20.02 प्रतिशत मुस्लिम जेलों में थे, जबकि उसी वक्त जनसंख्या में उनका अनुपात क्रमशः 16.63 प्रतिशत, 8.63 प्रतिशत और 14. 23 प्रतिशत था। छत्तीसगढ़ व झारखण्ड में हजारों आदिवासी बेल बान्ड ना भर पाने की वजह से जेलों में बने हुए हैं। इसके अलावा जेलों की अमानवीय स्थितियां और गिरफ्तारी के वक्त टार्चर दिया जाना अब सामान्य बात बन चुकी है।

किसी ने बिल्कुल सही कहा है कि किसी भी समाज में जनतंत्र कितना है, इसका पता वहां कि जेलों की स्थितियों से लगाया जा सकता है। और इस मापदण्ड पर दुनिया के सबसे 'पुराने' और सबसे 'बड़े' लोकतंत्र के ढकोसले की धज्जियां उड़ जाती हैं।

कुल मिलाकर यह अनिवार्य रुप से देखी जानी वाली फिल्म है।

येरवडा जेल में राजनैतिक बंदियों की भूख हड़ताल शुरु'

– हर्षाली पोतदार

महान क्रांतिकारी जतिन्द्र दास के शहादत दिवस पर आज 13 सितंबर से येरवडा जेल में बंद 6 राजनैतिक बंदियों द्वारा भूख हड़ताल शुरु कर दी गई है। जतिन दास शुरुआत में कांग्रेस सेवादल में सुभाषचन्द्र बोस के सहायक रह चुके थे। बाद में वे हिंदुस्तान सोशलिस्ट रिपब्लिकन एसोसिएशन से जुड़े। बम बनाने में उन्हें महारत हासिल थी। बहरे सत्ताधारीयों को सुनाने के लिए भगतसिंह और बटुकेश्वर दत्त द्वारा असेंब्ली में फेंका गया बम जतिन दास ने ही बनाया था। जेल में क्रांतिकारीयों के साथ राजनैतिक बंदियों जैसा व्यवहार हो, इस मांग को लेकर क्रांतिकारियों ने जेल में लंबी भूख हड़ताल की थी। जतिन दास भी उस भूख हड़ताल में शामिल हुए थे और 1929 में आज ही के दिन 25 वर्ष की आयु में भूख हड़ताल के 63 वे दिन जेल में वे शहीद हुए थे।

जतिन दास के शहादत दिवस 13 सितंबर को राजनैतिक बंदी अधिकार दिवस घोषित किया जाए, गैरकानूनी गतिविधियां प्रतिबंध कानून एवं आर्म्ड फोर्स स्पेशल पावर एक्ट जैसे काले कानून और मृत्युदंड का प्रावधान रद्द किया जाए तथा राजनीतिक बंदियों के साथ मानवीय व्यवहार किया जाए, इन मुख्य मांगों को लेकर भीमा कोरेगांव मामले में येरवडा जेल में बंद एडवोकेट सुरेंद्र गाडलिंग, सुधीर ढवले, महेश राऊत और रोना विल्सन के साथ ही अन्य मामलों में यूएपीए में बंद अरुण भेलके और के. मुरलीधरन ने भूख हड़ताल शुरु कर दी है।

यहां यह समझना जरुरी है कि राजनैतिक विचारों और क्रियाकलापों के कारण जिन्हें बंदी बनाया गया है उन्हें राजनैतिक बंदी घोषित किया जाना चाहिए, जैसा कि आजादी के मतवाले क्रांतिकारी राजनैतिक बंदी अंग्रेजों के समय में मांग करते थे। लेकिन अंग्रेजों के यहां से चले जाने के 71 साल पूरे होने पर भी यह मांग ज्यो कि त्यो बनी हुई है।

जिस तरह हर इंसान के लिए अन्न की आवश्यकता होती है उसी तरह विचारक राजनैतिक बंदियों के लिए किताबें महत्त्वपूर्ण होती है। मसलन एडवोकेट सुरेंद्र गडलिंग के लिए वैचारिक भूख पूरी करने के लिए कानून संबंधी किताबें और उच्चतम न्यायालय के भिन्न भिन्न मामलों पर दिए गए फैसलों को पढ़ना जरूरी है। यह किताबें मुहैया कराई जाने के आदेश सत्र न्यायालय द्वारा दिए जाने के बावजूद जेल प्रशासन इन किताबों को देने से रोक रहा है।

सुधीर ढवले लेखक एवं संपादक हैं, उन्हें अर्थशास्त्र, समाजशास्त्र और खासकर आंबेडकरी दलित आंदोलन से संबंधित किताबें पढ़ना आवश्यक है।

महेश राऊत ने टाटा सामाजिक संस्था से स्नातकोत्तर की डिग्री हासिल की है। आदिवासी और वन संबंधित कानून, नीतियां और आंदोलन से जुड़े साहित्य पढ़ना उन्हें भी जरूरी है।

दिमाग को क्रियाशील रखने के लिए उसका चिंतनशील और पठनशील होना जरूरी है। अगर उन्हें पढ़ने के लिए उनकी आवश्यकतानुसार किताबें यदि उपलब्ध नहीं करने दीं गई तो इसका सीधा मतलब विचाराधीन राजनैतिक बंदियों को मानसिक प्रताड़ना देना ही है।

एडवोकेट सुरेंद्र गाडलिंग जैसे बुद्धिजीवी बंदी का पिछले 3 महीने के दौरान मानसिक यातना देने के इरादे से ही, जेल प्रशासन द्वारा 5 बार जेल के अंदर ही स्थानांतरण किया गया।

इतना ही नहीं, जेल प्रशासन ठंड के कपड़े भी देने से साफ मना कर देते हैं। एक बार तो उन्होंने साफ शब्दों में कहा कि अब तो मानवीय आधार पर भी इनको कुछ नहीं दिया जा सकता है। कमोबेश यही हाल देश के अन्य कई जेलों में बंद अन्य राजनैतिक बंदियों का है।

जिसकी खायेंगे, उसी का गायेंगे

मार्च 2018 में सभी राजनीतिक पार्टियों ने मिलकर बिना किसी बहस के मात्र 30 मिनट में वित्त विधेयक 2017 को पारित कर दिया इसमें 218 संशोधन को पास किया गया जिससे भारत की जनता के ऊपर दूरगामी असर पड़ना है। राजनीतिक पार्टियों को कहाँ से कितना और कौन पैसा दे रहा है इसको आम जनता से पूरी तरह से छुपाने का प्रयास किया गया। एफ. सी. आर. ए. में संशोधन करके यह प्रावधान कर दिया गया है कि किसी भी पार्टी को 1976 के बाद मिले विदेशी चन्दे की कोई जाँच नहीं की जायेगी। इस संशोधन के पीछे का तत्कालिक कारण यह है कि दिल्ली उच्च न्यायालय ने भाजपा और कांग्रेस को विदेशी चन्दा लेने का दोषी पाया था। इसी संशोधन में एक संशोधन चुनावी बाण्ड जारी करने का है। इसके अनुसार कोई भी कम्पनी बिना नाम बताये कितना भी बाण्ड खरीद सकती है और अपनी पसन्द की पार्टी को चन्दे के रूप में दे सकती है। पूर्व में विधान यह था कि कोई भी पार्टी अपनी विशुद्ध लाभ के 7.50 प्रतिशत से अधिक चुनावी चन्दा नहीं दे सकती थी। इस संशोधन में इस सीमा को खत्म कर दिया गया है। दूसरा उस कम्पनी को यह भी बताना होता था कि वह किस राजनीतिक पार्टी को यह चन्दा दी। इस संशोधन द्वारा इस प्रावधान को भी खत्म कर दिया गया है।

इन दोनों संशोधनों से अब यह सुनिश्चित हो गया है कि किसी भी राजनीतिक पार्टी को किस देश से, किस कम्पनी से या किस कारपोरेट क्षेत्र से कितना चन्दा आ रहा है यह जनता को कभी पता नहीं चल पायेगा। ताकि राजनीतिक पार्टियां अपने देशी–विदेशी आकाओं के लिए निर्बाध रूप से काम करती रहें और जनता को भ्रम में रखे कि वे इस देश व जनता के लिए काम करतीं हैं। इन दोनों प्रावधानों से राजनीतिक पार्टियों का भ्रष्टाचार और ज्यादा बढ़ेगा और उनको मिलने वाले चन्दों की पारदर्शिता पूरी तरह खत्म हो जायेगी। हमें यह समझ लेना चाहिए कि इन संशोधनों से वैसे तो सबसे ज्यादा फायदा भाजपा और कांग्रेस को होना है फिर भी सभी पार्टियों को थोड़ा बहुत फायदा होना है इसी कारण किसी ने विरोध नहीं किया।

– रिपोर्टर, विरुद्ध

मृत्यु उपत्यका' ही बन गया है – आबिदा

मृत्यु उपत्यका' ही बन गया है
हमारा देश
नवारुण दा !
शायद तुम्हें यक़ीन न हो
पर जब से तुम गए हो (31 जुलाई 2014)
सैकड़ों जोड़ा खुली आंखें
आसमान के कैनवास पर चिपक गयीं हैं
घूर रही हैं हमें
क्या कर रहे हो तुम लोग,
मौन क्यों हो?
नवारुण दा
हमें भी रातों में नींद
नहीं आती आजकल.
बेशक उनके परिजनों ने
कर ली है शिनाख़्त.
वे आठ दोस्त –भाई–बहन
निकले थे पास के गांव में
शादी के उत्सव में शरीक होने
तुम्हें तो पता ही होगा
नवारुण दा
कि आदिवासियों के नज़रिये
हमारी तरह तंग नहीं होते.
खुले निमन्त्रण होते हैं
शादी विवाह के उनके यहां.
सारी रात आप
बाहों में बाहें डाले
नाच सकते हैं जी भर
कहीं भी / कभी भी.

नवारुण दा
ये महज इत्तेफ़ाक ही है
कि उनकी संख्या भी
आठ ही थी
उस रोज़.
शादी के उत्सव में
शरीक होने गए थे वे सब
नृत्य की थाप
उनके कदमों में नहीं
उनके लहू में मचल रही थी.
बच्चे थे सारे के सारे
9 साल से 15 बरस के बच्चे
पांच लड़कियां, 3 लड़के.

कि तभी राजा के सिपाहियों ने
उन्हें पकड़ लिया.
उतार दी गोलियां उनके कलेजों में
शेष 32 लोगों के साथ
अमेरिका और इज़राइल के
आयातित हथियारों से.
उनके क्षत–विक्षत शरीरों की
40 जोड़ी खुली आंखें
जा के चिपक गयी हैं
उफ़क पर
घूरे जा रही हैं हमें
मौन क्यूं हो तुम ?

नवारुण दा याद है
मुक्तिबोध ने रात के 'अंधेरे में' देखी थी
'किसी मृत्युदल की शोभायात्रा'
जिसमें शामिल थे
'कई प्रकाण्ड आलोचक विचारक
जगमगाते कविगण, मंत्री भी,
उद्योगपति और विद्वान
और
यहां तक कि शहर का हत्यारा
डोमाजी उस्ताद !'

लेकिन नवारुण दा
आज मृत्युदल की यह शोभायात्रा
दिन की साफ़ शफ्फाक़ रोशनी में
निकलती है.
रंगेपुते इनके चेहरों में
शामिल होते हैं 'मेफ़िस्टो' भी.

यक़ीन करो नवारुण दा!
'जल्लादों का उल्लासघर' और
'रक्तरंजित कसाई घर'
में तब्दील हो
'विस्तीर्ण श्मशान' बन गया है
हमारा देश!
हमारा देश
'मृत्यु उपत्यका' ही बन गया है
नवारुण दा!

क्योंकि मौत की इस घाटी में
मर गये वे सब जो
मारे गये.
वे भी मरे हुए हैं जिन्होंने उन्हें मारा.
लेकिन सबसे पहले मरे वे हैं
जो मौन हैं.
प्रलाप करती हूं मैं
नवारुण दा कि
'मृत्यु उपत्यका' बन गया है
हमारा यह देश!

लेकिन नवारुण दा,
लोर्का बनने का भी
सबसे बढ़िया समय
आज ही है.
यही समय है
कलम के हथियार बनने और
चेतना के विस्फोट का.
यही सबसे तप्त समय है नवारुण दा,
'कविता के गांवों से
कविता के शहर को घेरने का'.

भीम आर्मी के संस्थापक चंद्रशेखर आज़ाद जेल से हुए रिहा

(साभार द वायर हिन्दी दिनांक– 14–09–2018)

लगभग 16 महीने से सहारनपुर जेल में बंद चंद्रशेखर को 1 नवंबर 2018 को रिहा किया जाना था. निकलकर कहा, 2019 में भाजपा को सत्ता से बाहर करेंगे.

लखनऊः भीम आर्मी के संस्थापक चंद्रशेखर आज़ाद उर्फ रावण को सहारनपुर की जेल से रिहा कर दिया गया है. न्यूज़ एजेंसी एएनआई के मुताबिक रावण को शुक्रवार सुबह 2:24 बजे जेल से रिहा किया गया.

पांच मई 2017 को सहारनपुर के शब्बीरपुर गांव में दलित और ठाकुर समुदाय के बीच जातीय हिंसा हुई थी. घटना के बाद चंद्रशेखर का नाम सामने आया था.

पुलिस ने उनके ख़िलाफ़ कई धाराओं के तहत मुक़दमा दर्ज किया था. उसके बाद वह भूमिगत हो गए थे. कुछ महीने बाद आठ जून 2017 को उत्तर प्रदेश एसटीएफ ने हिमाचल प्रदेश से उन्हें गिरफ्तार किया था.

दो नवंबर, 2017 को इलाहाबाद हाईकोर्ट ने चंद्रशेखर उर्फ रावण को जमानत दे दी थी. लेकिन उसके बाद उत्तर प्रदेश सरकार ने राष्ट्रीय सुरक्षा कानून (रासुका) लगाकर उन्हें गिरफ्तार कर लिया था.

राष्ट्रीय सुरक्षा कानून, 1980 के तहत किसी व्यक्ति को पहले तीन महीने के लिए गिरफ्तार किया जा सकता है. फिर आवश्यकतानुसार तीन–तीन महीने के लिए गिरफ्तारी की अवधि बढ़ाई जा सकती है. एक बार में तीन महीने से अधिक की अवधि नहीं बढ़ाई जा सकती है.

बता दें कि उत्तर प्रदेश सरकार ने चंद्रशेखर उर्फ रावण की जेल से जल्दी रिहाई का आदेश दिया था. चंद्रशेखर को 1 नवंबर 2018 को जेल से रिहा किया जाता. राज्य सरकार का कहना है कि रावण की मां के आवेदन पर सहानुभूतिपूर्वक विचार करते हुए उनकी समय से पहले रिहाई का फैसला लिया गया है.

जेल से निकलने पर चंद्रशेखर ने कहा, 'सरकार इस बात से डर गई थी कि उन्हें सुप्रीम कोर्ट से फटकार मिल सकती है. इसलिए उन्होंने खुद को बचाने के लिए जल्दी रिहा का आदेश दिया.'

रफाल डील अब तक का सबसे बड़ा रक्षा सौदा घोटाला – कृपा शंकर

बोफोर्स तोप सौदा घोटाले को मात देता हुआ अब सबसे बड़ा रक्षा सौदा घोटाला सामने आया है। तब पूरे देश में उसकी गूंज सुनाई दी थी और सरकार बदल गयी थी। जबकि आज भाजपा में वरिष्ठ नेता रहे यशवन्त सिन्हा, अरुण शौरी और सर्वोच्च न्यायालय के वरिष्ठ वकील प्रशांत भूषण के दो–दो प्रेस वार्ता के बावजूद गोदी मीडिया में इसे जगह नहीं मिल रही है। आइए पहले रफाल डील के कुछ तथ्य और पृष्ठभूमि पर ध्यान दें।

–सन् 2007 में वायुसेना ने 126 एयरक्राफ्ट की जरूरत बतायी। उस समय की यूपीए सरकार ने 'रिक्वेस्ट फॉर प्रोपोजल(आर एफ पी)' तैयार किया। इसके टेण्डर में खरीद की शुरुआती लागत, कम्पनी तकनीक देगी और भारत में इसे बनाने का लाइसेंस देगी यह सब होना था।

–इस पर टेण्डर निकला। 6 कम्पनियों ने टेण्डर डाले। वायुसेना 2 कम्पनियों के टेण्डर को संतोषजनक पायी। एक डास्सो एविएशन का राफेल और दूसरा यूरोफाइटर्स का विमान। यह 2011 में हुआ।

–2012 में सबसे कम लागत के आधार पर डास्सो एविएशन के रफाल को टेण्डर दे दिया गया।

–मार्च 2014 में हिन्दुस्तान एरोनॉटिक्स लिमिटेड और डास्सो एविएशन के बीच करार हुआ कि 108 लड़ाकू विमान भारत में ही बनाए जाएंगे। इसके लिए उसे टेक्नोलॉजी मिलेगी। 70 फीसदी काम हिन्दुस्तान में होगा और बाकी 30 फीसदी डास्सो करेगी।

–25 मार्च, 2015 को डास्सो के सीईओ ने कहा कि, 'एचएएल के चेयरमैन को सुनने के बाद आप मेरे संतोष की कल्पना कर सकते हैं.....हम जिम्मेदारियों को साझा करने पर सहमत हैं। हम रिक्वेस्ट फॉर प्रोपोजल की तय की गई प्रक्रिया को लेकर प्रतिबद्ध हैं। मुझे पूरा भरोसा है कि काण्ट्रैक्ट को पूरा करने और उस पर हस्ताक्षर करने का काम जल्दी हो जायेगा।'

–8 अप्रैल 2015 को उस समय के विदेश सचिव एस. जयशंकर ने प्रेस वार्ता में कहा कि, 'राफेल को लेकर मेरी समझ यह है कि फ्रेंच कंपनी, हमारा रक्षा मंत्रालय और हिन्दुस्तान एरोनॉटिक्स लिमिटेड के बीच चर्चा चल रही है। ये सभी टेक्निकल और डिटेल चर्चा है। नेतृत्व के स्तर पर जो यात्रा होती है उसमें हम रक्षा सौदों को शामिल नहीं करते हैं। वो अलग ही ट्रैक पर चल रहा होता है।'

परंतु 10 अप्रैल 2015 को हमारे देश के स्वनामधन्य 'प्रधान सेवक' और 'चौकीदार' नरेन्द्र मोदी ने फ्रांस के राष्ट्रपति ओलांद के साथ जब डील का ऐलान करते हैं तो अचानक अनुभवी कम्पनी एचएएल का नाम कट जाता है। उसकी जगह एकदम नयी और बिना किसी अनुभव के अनिल अम्बानी की कम्पनी 'रिलायंस डिफेंस' का नाम आ जाता है। विमान 126 से घटकर 36 हो जाते हैं। तकनीक ट्रांसफर को खत्म कर दिया गया। इसका मतलब है कि बार–बार विमान खरीदना पड़ेगा। मेकिंग इण्डिया खत्म। कीमत लगभग 700 करोड़ से लगभग 1700 करोड़ रुपये प्रति विमान हो गया। रिलायंस को 30फीसदी कमीशन यानी 21000 करोड़ रुपये दिया गया जबकि बोफोर्स में 64 करोड़ कमीशन था।

प्रशांत भूशण ने रफाल डील पर वाजिब सवाल उठायें हैं।

1–विमानों की संख्या 126 से सिर्फ 36 किसने कर दिया? क्या वायुसेना ने नया प्रोपोजल दिया?

2–शुरू से इस डील में शामिल एचएएल को हटाकर अचानक बैंकों के 8000 करोड़ की बकायेदार रिलायंस डिफेंस को कैसे शामिल कर लिया गया?जबकि एचएएल का नाम 25 मार्च और 8 अप्रैल 2015 तक डील में आता रहा था।

3–126 विमान में से 108 भारत में बनने थे, जो मेकिंग इण्डिया होता और इस हेतु डास्सो को तकनीक देना था। परन्तु आत्मनिर्भरता की तरफ बढ़ने के इस कदम को क्यों रद्द कर दिया गया? और सभी 36 विमान फ्लाई ओवर कण्डीशन में किसके हित में मंगाया जा रहा है?

4–पहले विमान की कीमत की तुलना में अब 1000 करोड़ रुपये प्रति विमान अधिक कीमत कैसे हो गया?

इन सवालों का जवाब देश की जनता को देने की बजाय इसे सुरक्षा के नाम पर मोदी सरकार छुपा रही है ताकि यह घोटाला दबा रहे। इतने बड़े रक्षा सौदा घोटाला होने के बावजूद आज देश की गोदी मीडिया इसे जनता के सामने लाने की जगह अभी भी मोदी की तारीफों में ही लगी है। इस रफाल डील ने मोदी सरकार की साम्राज्यवादी चाटुकारिता, देशी दलाल प्रवृत्ति के अम्बानियों की सेवा और देश की आत्मनिर्भरता–स्वाधीनता को गिरवी रखने के चरित्र को एक साथ पर्दाफाश कर दिया है।

सामाजिक कार्यकर्ताओं की गिरफ़्तारियों का उद्देश्य राजनीतिक लाभ लेना है

– बीजी कोलसे पाटिल

(भीमा कोरेगांव हिंसा और प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी की हत्या की कथित साज़िश रचने के आरोप में सामाजिक कार्यकर्ताओं की गिरफ़्तारी के बाद से एल्गार परिषद चर्चा में है। एल्गार परिषद के माओवादी कनेक्शन समेत तमाम दूसरे आरोपों पर इसके आयोजक और बॉम्बे हाईकोर्ट के रिटायर्ड जस्टिस बीजी कोलसे पाटिल का पक्ष। दिनांक:13–09–2018 को मीनाक्षी तिवारी से बातचीत पर आधारित। साभार–द वायर हिन्दी –सम्पादक)

एल्गार परिषद के माओवादी कनेक्शन से पहले थोड़ा पीछे चलते हैं। 2002 के गुजरात दंगों के बाद जस्टिस पीबी सावंत और जस्टिस कृष्ण अय्यर ने एक पब्लिक ट्रिब्यूनल के तहत गुजरात दंगों पर नरेंद्र मोदी के खिलाफ एक रिपोर्ट सौंपी थी, जिसमें कहा गया था कि इस नरसंहार के लिए मोदी को सज़ा मिलनी चाहिए और उन्हें जीवन भर किसी संवैधानिक पद की ज़िम्मेदारी नहीं दी जानी चाहिए।

मैं और जस्टिस सावंत लगभग बीते 30 सालों से धर्मनिरपेक्षता, समाजवाद और लोकतंत्र के लिए काम करते रहे हैं। मैं मोदी के सत्ता में आने से पहले से ही उनके प्रति आलोचनात्मक रहा हूं। 4 अक्टूबर 2015 को हमने शनिवारवाड़ा में ही एक रैली का आयोजन किया था और आरएसएस मुक्त भारत की मांग रखी थी। उसके आयोजक भी हम ही थे। वहां हमने शपथ ली थी कि अपने जीवन में हम कभी भाजपा या किसी सांप्रदायिक दल को वोट नहीं देंगे या मोदी का समर्थन करेंगे।

देश भर के लोगों के साथ गलत हो रहा है और ये सभी प्रगतिशील लोग हैं। तो इसलिए हमने महाराष्ट्र से सुधीर धावले, कबीर कला मंच जैसे कुछ लोगों को आमंत्रित किया था। हमें लगा था कि भीमा कोरेगांव की 200वीं सालगिरह पर बड़ा जश्न होगा और लोगों तक अपनी बात पहुंचाने का अच्छा अवसर होगा, तो क्यों न 31 दिसंबर को देश भर से लोगों को शनिवारवाड़ा में बुलाया जाये।

हम इसमें सफल भी रहे। करीब 253 संगठन इस बैठक में शामिल हुए और हम सबने शपथ ली कि अपने जीवनकाल में कभी भाजपा को वोट नहीं देंगे। और यही कारण है कि एल्गार परिषद को निशाना बनाया जा रहा है।

हम लोग इस कार्यक्रम के आयोजक हैं। आरोप है कि इस कार्यक्रम को माओवादियों ने फंड दिया था। किसके लिए, कि लोग भीमा कोरेगांव आएं और आकर परिषद में हिस्सा लें?

कार्यक्रम के आयोजन को लेकर भी सवाल हैं, लेकिन मैं बता दूं कि हमारे कार्यक्रम की अगली सुबह (1 जनवरी) उसी जगह एमआईटी का कार्यक्रम था, जहां वे प्रख्यात वैज्ञानिक डॉ. आरए माशेलकर के 75वें जनदिन पर उन्हें सम्मानित करने वाले थे।

हमारा कार्यक्रम शाम को था तो उन्होंने हमसे आग्रह किया कि क्या वे शाम को ही अपने कार्यक्रम के लिए स्टेज–कुर्सी, सजावट आदि व्यवस्थाएं कर सकते हैं, हमें इस पर कोई आपत्ति नहीं थी, इसलिए उनकी सहूलियत के लिए हम राज़ी हो गए। तो इस तरह के खर्चे की हमें ज़रूरत नहीं थी।

हम आम लोगों के बीच रहने वाले लोग हैं। हम ट्रक ड्राइवर, मजदूरों जैसे आम लोगों से मिलते हैं, बात करते हैं। बैठकों आदि में लाखों लोगों से बात करते हैं। हमें इस सब की ज़रूरत नहीं है। हमारा आंदोलन जन आंदोलन है। हम नेता नहीं हैं। तो इस परिषद के लिए माओवादियों द्वारा फंड दिए जाने की बात कोरा झूठ है, सौ फीसदी झूठ। इस तरह की फंडिंग का तो सवाल ही नहीं उठता।

अगला सवाल उठता है कि वे यह क्यों कर रहे हैं? क्योंकि हम बरसों से उनके, और इन सांप्रदायिक ताकतों के खिलाफ काम कर रहे हैं। मोदी से कोई दुश्मनी तो है नहीं। लेकिन उनकी सरकार बौद्धिक प्रतिरोध सहन नहीं कर सकती। इसीलिए धर्मनिरपेक्षता के बतौर हम बार–बार यही शपथ लेते हैं कि ऐसे लोगों को वोट नहीं देंगे।

महाराष्ट्र पुलिस का यह भी आरोप है कि कार्यक्रम में दिए गए भाषण संविधान के खिलाफ थे और इन्हीं की वजह से हिंसा भड़की थी। मैं यही कहूंगा कि वे साबित करें। एनडीटीवी द्वारा टेलीविज़न पर दिखाए गए हैं, हमने इन्हें रिकॉर्ड किया था, ये भाषण सार्वजानिक हैं, यूट्यूब पर आप इन्हें देख सकते हैं। इन्हें देखकर खुद निर्णय लीजिये कि क्या ये असंवैधानिक हैं।

वे एक कविता की बात कर रहे हैं, जो धावले ने पढ़ी थी, पर कविता किसी भी संदर्भ में हो सकती है, यह समझने वाली बात है। बिनायक सेन मामले में सुप्रीम कोर्ट का फैसला देखें। कोर्ट खुद कह चुका है कि अगर आपकी विचारधारा वही है या फिर आप माओवाद का समर्थन करते हैं, तो आप माओवादी नहीं हो जाते।

संक्षेप में कहें तो जो भी इस सरकार के खिलाफ है, उसे झूठे आरोप में फंसाकर 2019 तक जेल भेजा जा रहा है। ये सब ध्यान भटकाने के तरीके हैं। कम से कम 3 एजेंसियां, पुणे ग्रामीण पुलिस, आंध्र प्रदेश का एक पब्लिक ट्रिब्यूनल और संबंधित क्षेत्र के डीआईजी के एक ट्रिब्यूनल ने एकमत होकर संभाजी भिड़े और मिलिंद एकबोटे को इस हिंसा का जिम्मेदार बताया था।

वे अपराधी हैं। उन्होंने इस इलाके में महीनों तक काम किया था। 29 दिसंबर को ही उन्होंने महारवाड़ा में गोविंद गोपाल महार की समाधि को नुकसान पहुंचाया था।

वे इतिहास बदलना चाहते हैं। ये सब आरएसएस की जानी–पहचानी शैली है, वे महारों और मराठाओं के बीच मतभेद पैदा करवाना चाहते हैं और इसके लिए वे महीनों से तैयारी कर रहे थे। भीमा कोरेगांव की घटना वाले दिन भी उन्होंने इस समाधि से लेकर भीमा कोरेगांव तक एक बड़ा जुलूस निकाला था। हुई थी। उन्होंने बंद की अपील की थी, जिससे उन्हें कुछ खाना–पीना ही न मिले। यह बहुत ही ख़राब है और सुनियोजित षड्यंत्र है, जो हो सकता है सरकार की मदद के साथ किया गया हो। क्योंकि पुलिस ने इसके बाद भड़की हिंसा पर कोई एक्शन नहीं लिया, जैसा मोदी ने गुजरात दंगों में किया था। दंगाइयों को 72 घंटे दे दिए गए थे कि जो करना है करो।

यह सब इन बातों से ध्यान हटाने के लिए किया जा रहा है। दूसरी बात जिससे वे ध्यान हटाना चाहते हैं, वह है देश चला पाने में मोदी की विफलता. जो भी मोदी के विरोध में कुछ बोल रहा है, उसे निशाना बनाया जा रहा है।

उनका इरादा परिषद को बदनाम करने का है। वे मुख्य आरोपियों भिड़े–एकबोटे से ध्यान हटा रहे हैं, इस पर काम करने की बजाय उन्होंने एल्गार परिषद का माओवादियों से लिंक निकाल लिया, जिसमें मुख्यमंत्री और प्रधानमंत्री को मारने की साज़िश भी शामिल है।

प्रधानमंत्री की हत्या की कथित साज़िश पर अगर उनके पास पुख्ता सबूत हैं, तो केवल एक पत्र क्यों सामने लाया जा रहा है?

मैं यही कहूंगा कि ये सिर्फ बहस को दूसरी तरफ ले जाने के कुछ उद्देश्यों से किया जा रहा है। पहला मकसद कि भिड़े–एकबोटे पर बात न हो, दूसरा मोदी की विफलताओं पर बात न हो और तीसरा उद्देश्य है सनातन संस्था।

पुलिस को संस्था के साधकों से बम बरामद हुए थे, हमारी मांग है कि केवल साधकों की गिरफ़्तारी से कुछ नहीं होगा, हमें इसकी जड़ तक जाना होगा यानी जयंत अठावले।

जब पहले 5 सामाजिक कार्यकर्ताओं को गिरफ्तार किया गया था, तब वे भीमा कोरेगांव से ध्यान हटाना चाहते थे, इसके बाद 5 कार्यकर्ताओं की गिरफ़्तारी तब हुई जब देश सनातन संस्था के बमों की बात कर रहा था। इनके अलावा वे मुझे और जस्टिस सावंत को बदनाम करना चाहते हैं।

जहां तक गिरफ़्तार किए गए कार्यकर्ताओं की बात है, मेरा सुधीर धावले के अलावा किसी से कोई खास परिचय नहीं था। हम कई सालों से धावले और कबीर कला मंच के कानूनी सलाहकार रहे हैं। जब भी उन पर कोई मुश्किल आयी, हम सामाजिक न्याय की लड़ाई में उनके साथ खड़े थे। हम उन्हें जानते थे, इसलिए उन्हें परिषद में आमंत्रित किया था।

गाडलिंग का नाम सुना था कि वे नागपुर क्षेत्र में गरीबों और कथित नक्सलियों के लिए लड़ रहे हैं। वे धावले का केस भी लड़ रहे थे। धावले पर नक्सलियों से जुड़ाव के झूठे आरोप लगाए गए थे, जिस पर सेशन कोर्ट और हाईकोर्ट दोनों ने यह कहते हुए उन्हें बाइज्जत बरी किया था कि सरकार बिना किसी सबूत के उन पर आरोप लगा रही है। तो इसी तरह गाडलिंग से जान–पहचान थी।

वे कई बार मुझे मिलने के लिए बुलाया करते थे। मैं नागपुर में हुई कुछ बैठकों का हिस्सा रहा हूं। जैसे हमारी शिकायत थी कि नागपुर जेल में बंद जीएन साईबाबा के साथ अमानवीय व्यवहार हो रहा है। तो मुझे पता था कि गाडलिंग एक वकील हैं, धावले एक सामाजिक कार्यकर्ता हैं।

इनके अलावा गिरफ्तार किये गए किसी भी व्यक्ति को हम प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष, किसी तरह नहीं जानते। और जहां तक किसी नक्सली से पहचान का सवाल है, न हम किसी को जानते हैं और न ही उनकी एल्गार परिषद तक कोई पहुंच है।

परिषद के समय जस्टिस सावंत की तबियत थोड़ी ख़राब हो गयी थी और उन्हें पास के एक अस्पताल में भर्ती करवाया गया था। जब मैं वहां से लौटा तब मंच पर बहुत–से लोग थे।

इन सभी को गैर–कानूनी गतिविधि (रोकथाम) क़ानून (यूएपीए) के तहत गिरफ्तार किया गया है। मैं खुद न्यायपालिका का हिस्सा रहा हूं और मुझे लगता है कि इसके बनने के समय से ही इसका गलत इस्तेमाल हो रहा है। क्योंकि आप बिना किसी सबूत के किसी भी व्यक्ति को कम से कम एक साल के लिए जेल में डाल सकते हैं।

इस समय इसके तहत लाखों लोग जेल में हैं और इनमें ज्यादातर दलित और आदिवासी हैं। निश्चित तौर पर यूएपीए का गलत इस्तेमाल हो रहा है। क्रिमिनल लॉ के अनुसार आप जब तक कोई व्यक्ति दोषी साबित नहीं हो जाता, आप उसे सजा नहीं दे सकते, लेकिन यूएपीए में ऐसा नहीं होता।

देश भर में कई लोगों के साथ ऐसा हुआ है। आप किसी पर भी झूठे आरोप लगाकर यूएपीए के तहत उसे गिरफ्तार कर सकते हैं। जब तक वे आरोप गलत साबित होंगे तब तक क्या? तब तक उस व्यक्ति को हुए नुकसान का क्या?

हमसे सवाल किया जाता है कि हम इस कार्यक्रम के अकेले आयोजक थे, क्या पुलिस ने हमसे संपर्क किया? नहीं, अब तक तो नहीं। जब मीडिया पुलिस से हमारे बारे में सवाल करती है तब वे कहते हैं कि हमारा इससे कोई लेना–देना नहीं है। उन्होंने यह भी बयान दिया था कि एल्गार परिषद का भीमा कोरेगांव हिंसा से कोई संबंध नहीं है।

ऐसा उन्होंने पहली प्रेस कॉन्फ्रेंस में कहा, दूसरी बार उन्होंने कहा परिषद में भाग लेने वाले सभी माओवादी नहीं हैं। फिर उनका कहना था कि प्रधानमंत्री की हत्या की साज़िश में सब शामिल नहीं हैं।

इन सब गिरफ्तारियों का उद्देश्य राजनीतिक लाभ लेना है। भाजपा और मोदी इसका लाभ लेना चाहते हैं। ऐसा वो गुजरात में भी कर चुके हैं।

वहां भी ऐसा ही हुआ था कि मोदी को ये मारने आये थे, इसलिए एनकाउंटर हुआ। एनकाउंटर क्या वहां तो कस्टडी से उठाकर ले गए, बाहर ले जाकर मारा और कहा एनकाउंटर हुआ। अब वो यही प्रयोग राष्ट्रीय स्तर पर कर रहे हैं। वे उसी गुजरात मॉडल को बाहर निकाल लाए हैं।

देश में ऐसा पहली बार हो रहा है कि दलित और सामाजिक कार्यकर्ताओं को माओवादी बताया जा रहा है। मोदी सरकार पर दलित–विरोधी होने का आरोप है, लेकिन असल में कहूं तो मोदी सरकार हर एक के खिलाफ है।

मोदी राज में अलग तरह का विभाजन है। वे दलित, मुस्लिम, ओबीसी, आदिवासी, बुद्धिजीवी सबके विरोध में हैं। वो दलित, ओबीसी, आदिवासी को मुस्लिमों का डर दिखाते हैं। दलित, ओबीसी, आदिवासी को हिंदू धर्म में रखने के लिए वे मुस्लिमों का डर दिखाकर राज चला रहे हैं।

उनकी विचारधारा के बौद्धिक विरोध का जवाब वे उसी तरह नहीं दे सकते। उस भाषा में जवाब देने की बजाय वे उन्हें मार रहे हैं, उन्हें जेल में डाल रहे हैं। यह अघोषित आपातकाल है, जो घोषित आपातकाल से ज़्यादा ख़राब है।

ब्राह्मणवादी कार्पोरेट हिंदू फासीवाद यानी नई पेशवाई को उखाड़ फेंके! – डॉ. सिद्धार्थ

(28 अगस्त, 2018 को देश के सात शहरों के दसियों नामी सक्रिय बुद्धिजीवियों–सामाजिक कार्यकर्त्ताओं के यहां अचानक महाराष्ट्र पुलिस ने छापे डालकर उनमें से 5 को गिरफ्तार कर लिया। हिन्दुत्व फासीवादी मोदी सरकार के इस कृत्य के खिलाफ पूरे देश में तीव्र प्रतिक्रिया हुई। पूरे देश के लगभग सभी शहरों में इसके खिलाफ बुद्धिजीवी से लेकर मजदूर वर्ग सभी वर्गों–तबकों के लोगों ने विरोध–प्रदर्शनों में हिस्सा लिया। कई सेवानिवृत जज, उच्च न्यायालयों–सर्वोच्च न्यायालय के दर्जनों वरिष्ठ व अन्य वकील और रोमिला थापर जैसी प्रसिद्ध इतिहासकार सहित कई हस्तियों ने इन सामाजिक कार्यकर्ताओं के पक्ष में उच्च व सर्वोच्च न्यायालय में पहल लिया। नतीजतन सर्वोच्च न्यायालय के हस्तक्षेप व पुलिस के खिलाफ तल्ख टिप्पणियों के साथ ये पांचों कार्यकर्ता अपने घरों में नजरबंद हैं। इस मामले में सुनवाई पूरी हो चुकी है जिसका फैसला आना अभी बाकी है। हालांकि यह नजरबंदी भी न्यायोचित नहीं है यह इस देश के जनवाद पसंद शक्तियों की आंशिक जीत है। फासीवाद विरोधी मोर्चा, उत्तर–प्रदेश व उसके घटक संगठनों ने अन्य जनवादी–क्रान्तिकारी संगठनों/व्यक्तियों के साथ मिलकर इलाहाबाद, बनारस, आजमगढ़, गोरखपुर, देवरिया इत्यादि शहरों, कस्बों में विरोध–प्रदर्शनों को आयोजित किया। इस घटना ने फासिस्ट मोदी सरकार के खिलाफ सभी शक्तियों के संगठित प्रतिरोध को अपरिहार्य बना दिया है यहाँ प्रस्तुत है उसी दिन लिखा फारवर्ड प्रेस हिन्दी के सम्पादक डॉ. सिद्धार्थ का लेख। –सम्पादक)

ब्राह्मणवादी कार्पोरेट हिंदू फासीवाद यानी नई पेशवाई ने देश के उन लेखकों–बुद्धिजीवियों का मुंह पूरी तरह से बंद करने का निर्णय ले लिया है, जो आदिवासियों, दलितों और मुसलमानों या अन्याय के शिकार अन्य तबकों–वर्गों के साथ खड़े हैं। इसी कड़ी में सुधा भारद्वाज, गौतम नवलखा, वरवरा राव, वर्नन गोंजाल्विस और अरूण फरेरा को गिरफ्तार किया गया। सात राज्यों में अन्य लेखकों–बुद्धिजीवियों के यहां पुलिस ने छापा मारा । इन सभी लोगों को भीमा–कोरेगांव हिंसा में संलिप्त होने के आरोप में गिरफ्तार किया गया है।

इससे पहले 6 जून को पुलिस ने अन्य पांच लोगों को भीमा और शनिवारवाड़ा में लोगों को हिंसा के लिए उकसाने और प्रेरित करने के आरोप में महाराष्ट्र पुलिस ने गिरफ्तार किया था। यह कहानी भी गढ़ी गई कि प्रधानमंत्री को मारने की साजिश रचने वाला पत्र मिला है। 6 जून 2018 को गिरफ्तार लोगों में दलित लेखक–कार्यकर्ता सुधीर ढावले, प्रोफेसर सोमा सेन, एडवोकेट सुरेन्द्र गाड़लिंग, रोना विल्सन और महेश राऊत शामिल हैं। सुधीर ढावले दलित लेखक और कार्यकर्ता हैं और विद्रोही पत्रिका के संपादक हैं, जबकि सुरेंद्र गाडलिंग एसोसिएशन ऑफ पीपुल्स लायर्स, नागपुर के सचिव हैं। प्रोफेसर सोमा सेन नागपुर विश्वविद्यालय के अंग्रेजी विभाग की विभागाध्यक्ष हैं। रोना विल्सन पब्लिक रिलेशन कमेटी फॉर रिलीज ऑफ पॉलिटिकल प्रिजनर्स के सचिव हैं और महेश राऊत भारत जनआंदोलन के विस्थापन विरोधी कार्यकर्ता हैं।

जिन पांच लोगों को आज गिरफ्तार किया है। वे ऐसे लेखक और बुद्धिजीवी हैं, जो अन्याय के खिलाफ बोलते, लिखते हैं और जरूरत पड़ने पर सड़क पर भी उतरते हैं। गौतम नवलखा लेखक और मानवाधिकार कार्यकर्ता हैं। वरवरा राव कवि और कार्यकर्ता हैं। सुधा भारद्वाज पिछले 35 साल से अधिक समय से छत्तीसगढ़ में मजदूर, किसान और गरीबों की लड़ाई सड़क और कोर्ट में लड़ती रहती हैं। अमेरिकी नागरिकता छोड़कर वे इस देश के मजलूमों को लिए लड़ती हैं। दलित लेखक और बुद्धिजीवी आनंद तेलतुम्बडे के घर भी छापा मारा गया। वे वहां नहीं मिले। हम सभी जानते हैं कि वे आईआईटी में प्रोफेसर हैं।

ये सारी गिरफ्तारियां उस भीमा–कोरेगांव के नाम पर हो रही हैं जहां कि 1927 में आंबेडकर गये थे और उन्होंने इस स्थल को दलितों के शौर्य के स्थल के रूप में याद किया था। हम जानते हैं कि 1 जनवरी 2018 को लाखों की संख्या में लोग कोरेगांव–भीमा में जुटे थे। इसमें दलित–बहुजन समुदाय के लोग और अन्य प्रगतिशील व्यक्ति शामिल थे। दलित–बहुजनों की यह जुटान ब्राह्मणवादी पेशवाई शासन के अंत के 200 वर्ष बीतने पर हुई थी। पेशवा की सेना को पराजित करने में अछूत कहे जाने वाले महार सैनिकों की निर्णायक भूमिका थी। 1 जनवरी 1818 को भीमा नदी के किनारे हुए इस युद्ध ने ब्राह्मणवादी पेशवाई का अन्त कर दिया था। इसके चलते दलित–बहुजनों और महिलाओं के लिए एक नए युग की शुरुआत हुई थी। इस वर्ष की जुटान में भारत की नई पेशवाई को उखाड़ फेंकने का संकल्प लिया गया था।

भीमा–कोरेगांव लाखों दलित–बहुजनों और प्रगतिशील लोगों की जुटान की ही अगली कड़ी 2 अप्रैल का ऐतिहासिक बंद था। जिसने ब्राह्मणवादी कार्पोरेट पूंजी के मालिकों की नींद उड़ा दी। उन्हें डर सता रहा है कि यदि पहले से ही संघर्ष कर रहे आदिवासियों के साथ दलित, बहुजनों, अल्पसंख्यकों और प्रगतिशील लोगों का गठजोड़ बन जाता है, तो यह गठजोड़ ब्राह्मणवादी कार्पोरेट पूंजीवाद के लिए बड़ा खतरा बन सकता है, उसे उखाड़ कर फेंक भी सकता है।

हम सभी जानते हैं कि कोई भी स्थायी गठजोड़ विचारों और हितों की एकता के आधार पर ही बनता है। दो टूक शब्दों में कहा जाए तो जिन पांच बुद्धिजीवियों को आज गिरफ्तार किया गया है और जिन पांच लोगों को 6 जून को गिरफ्तार किया गया था, वे सभी अन्याय के शिकार तबकों–वर्गों की एकजुटता के विचारों के वाहक हैं। इन्हें गिरफ्तार करके नई पेशवाई अन्य बुद्धिजीवों और स्वतंत्रचेता लोगों को चुप कराना चाहती है और डराना चाहती है। लेकिन लोगों को डराने की नई पेशवाई की यह कोशिश नाकामयाब रही। गिरफ्तार किए गए लोगों को फासीवादी निजाम ने 'अर्बन नक्सल' कहा। इसका परिणाम उल्टा हुआ। हजारों की संख्या में लोगों ने खुद सोशल मीडिया पर अपने को 'अर्बन नक्सल' घोषित करना शुरू कर दिया। देश के हर कोने में लोग इन गिरफ्तारियों के विरोध में सड़कों पर उतर आए। जिन्हें सरकार डराकर घरों में दुबकने के लिए बाध्य करना चाहती थी वे लोग और साहस के साथ सड़कों

ब्राह्मनिज्म और हिन्दुइज्म एक है और फासीवाद उसके अंदर निहित है।

(विरुद्ध के संपादक कृपा शंकर ने प्रसिद्ध संस्कृतिकर्मी और दिल्ली विश्वविद्यालय में शिक्षक रहे डा. शमसुल इस्लाम से 28जून 2018 को गोरखपुर में भारत में फासीवाद व उसकी विशिष्टता पर लम्बी बातचीत किया था। यहां उसका कुछ हिस्सा दिया जा रहा है। –संपादक)

कृपा शंकर–आपने अक्सर इस बात पर जोर दिया है कि हिन्दुत्व या ब्राह्मणवादी विचारधारा हमेशा से फासीवादी रही है। आज हम विशेषकर 2014 के बाद जिस तरह के फासीवाद का सामना कर रहे हैं उसके साथ हिन्दुत्व की इस विचारधारा का क्या संबंध है?

शमसुल इस्लाम –असल में आपके सवाल में जवाब है कि हिन्दुत्व बेसिकली क्या है? हिन्दुत्व या हिन्दुइज्म जैसा इस देश के लोग मानते हैं। वो नहीं है। हिन्दुत्व है ब्राह्मनिज्म। यानी सारा हिन्दू समाज मनुस्मृति के अन्तर्गत आता है। और मनुस्मृति एक ऐसा खतरनाक दर्शन है, एक ऐसा खतरनाक कानून है जिसको सावरकर और आरएसएस वाले कहते हैं कि वह हिन्दुओं का कानून है। हमको भारत के संविधान की कोई जरूरत नहीं है। हमारा तो हजारों साल से ये कानून है। मनुस्मृति। जिसमें औरतों को और जो शूद्र हैं, जिनको हम दलित के तौर पर जानते हैं उनको इंसान बनने का हक नहीं है। तो ये नस्लवाद है। ये फासीवाद है। फासीवाद नस्लवाद पर टिका रहता है। और वो ये कहता है जो उच्च कुल के लोग हैं जैसे आर्य वो ही इंसान हैं बाकी सब का काम उनकी सेवा करना है। ये ब्राह्मनिज्म और हिन्दुइज्म एक है और फासीवाद उसके अंदर निहित है।

कृपा शंकर– आपने अपने कई साक्षात्कारों व लेखों में आज के फासीवाद को 1990–91 में हुई नवउदारवादी या वैश्विक अर्थव्यवस्था से जोड़ा है।

शमशुल इस्लाम–हां असल में ये सहेलियां है। साम्राज्यवाद, नवउदारवाद, या दमन पर टिकी व्यवस्था और फासीवाद जिसको नवउदारवाद कहते हैं जिसको ये सारे लोग कहते थे उदारवाद या ग्लोबलाइजेशन। ये बेसिकली साम्राज्यवाद का दूसरा नाम है। क्योंकि साम्राज्यवाद बहुत बदनाम हो गया था। तो अब उन्होंने ये शब्द गढ़ लिया। लिबरलिज्म, ग्लोबलाइजेशन। अगर उनको एक फासीवाद मिल जाए मदद करने के लिए और फासीवाद क्या है? एक सामाजिक और राजनीतिक स्थिति। जिसमें जो नीचे है, वह नीचे ही रह जाएगा। उनको दबना है वे आवाज नहीं उठा सकते। तो आप यह देखेंगे कि रामजन्मभूमि आंदोलन और आई एम एफ व गैट उसके पहले गैट..... जो भारत में वैश्वीकरण साथ–साथ आ रहा था। 1988 का समय है जिस समय रथ यात्राएं हो रही हैं और ये जो हिन्दुत्व राजनीति है उसका एकमात्र मकसद ये था। ये जो साम्राज्यवाद है, जो नया लबादा पहन कर आ रहा है, पीछे के दरवाजे से आ रहा है, वह सामने के दरवाजे से आए। वो ऐसा जनता को बांट देंगे कि वो सामने के दरवाजे से आए। उसे छुपकर आने की जरूरत नहीं है। और हमने देखा कि राममंदिर और बाबरी मस्जिद घटना के बाद आईएमएफ, वर्ल्ड बैंक सब कितने आसानी से आ गया। और हमारी सारी अर्थव्यवस्था उनके हाथ में सौंप दी गई।

कृपा शंकर–नहीं। इसमें हमारा सवाल ये था कि 2008 में जो भीषण मंदी थी उसके बाद से पूरी दुनिया में दक्षिण पंथी ताकत का उभार हुआ है। उसका भारत के फासीवाद से क्या संबंध था?

शमशुल इस्लाम–मैं इसमें थोड़ा करेक्ट करना चाहूंगा। विश्वमंदी देशों की नहीं ये पूंजीवाद की विश्वमंदी थी। ये जो मोनोपोली कैपिटल था और जो बैंको का कब्जा था, उसकी तबाही हुई थी । देखिए मार्क्स और लेनिन ने पहले ही कहा था कि ये एक समाधान करते हैं और दो कब्र खोदते हैं। वो क्रांति बचाने के लिए वो उपनिवेशवाद में आ गए और वे सोचते थे कि उपनिवेशवाद से अपने देश की क्रांति से बचा लेंगे। लेकिन उपनिवेशवाद में होता क्या है कि वहां वे क्रांति की स्थितियां पैदा कर देते हैं।

ये बैंक की जो पूंजी थी, हमारे यहां महाजनी पूंजी कहते हैं, जो सूद पर टिकी थी। अब तो प्रोडक्शन पर भी नहीं है। जिसकी बात प्रेमचंद भी कहते हैं तो उनकी महाजनी सभ्यता का नतीजा यही होना था आप किसी को कर्ज देते रहेंगे और चुकाने की किसी की स्थिति तो है नहीं तो आपका जो कर्जदार है वो भी डूबेगा और आप भी डूबेंगे। उसके लिए उन्होंने सारी दुनिया की अर्थव्यवस्था को ही जिम्मेदार ठहरा दिया कि ये आपकी वजह से हो रहा है। लेकिन उसका मतलब ये था कि भारत जैसी तीसरी दुनिया की अर्थव्यवस्था को जिनको थोड़ी स्वतंत्रता है को अपने कब्जे में लेना। और अपने नुकसान की भरपाई करना। और हमारा जो रूलिंग क्लास है उसके लिए तैयार बैठा था। हमारा रूलिंग क्लास की हालत ये है कि उसको बैठने के लिए कहो तो वह लेट जाता है और लेटने के लिए कहो तो कपड़े उतार देता है। ये स्थिति है।

कृपा शंकर–आपने अपने साक्षात्कारों–लेखों में इस बात को भी महत्वपूर्ण तरीके से उठाया है कि कांग्रेस शुरू से ही आरएसएस और हिन्दू महासभा के प्रति साफ्ट रही है। इसका चरम रुप प्रणब मुखर्जी के आरएसएस के हेडक्वार्टर भ्रमण में दिखायी देता है। इससे आरएसएस या बीजेपी के उभार में एक निर्णायक मदद मिली है। इस बात को थोड़ा स्पष्ट कीजिए।

शमशुल इस्लाम–बहुत गहरा संबंध रहा है। जब आरएसएस बनी और जो लोग हिन्दु महासभा में आए, वे एक ही साथ कांग्रेस के भी मेम्बर रहे। जैसे हेडगवार कांग्रेस में ही था लेकिन हिन्दू–मुस्लिम एकता के सवाल पर बाहर आया। उसकी जो जीवनी है जो आरएसएस की तरफ से आधिकारिक तौर पर छपी है। उसमें साफ है कि ये हिन्दु मुसलमान एकता का सवाल था। और सारे देश के लोगों को एक राष्ट्र मानकर राष्ट्रीय आंदोलन चलाना वे सही नहीं मानते थे। यह हिन्दू राष्ट्र के आंदोलन के लिए था। हालांकि आरएसएस के लोग ये झूठ बोलते हैं कि हेडगेवार इसलिए कांग्रेस से बाहर आया क्योंकि वह खिलाफत आंदोलन के खिलाफ था। कांग्रेस की कॉल पर हेडगेवार पहली बार जेल गया 1920 में। वह खिलाफत आंदोलन के पक्ष में बहुत भड़काऊ भाषण दिया था। खिलाफत आंदोलन पर झगड़ा करके तो जिन्ना बाहर गए थे। जिन्ना ने कांग्रेस छोड़ी कि गांधीजी ये जो मौलवियों को और ये धार्मिक गुरूओं को राजनीति में ला रहे हैं; इस वजह से छोड़ी थी। लेकिन कांग्रेस में भी छुप्पम छुपाई चलती रही। कांग्रेस का एक बड़ा हिस्सा आरएसएस का समर्थक था जिसमें 'ऊंची' जाति के लोग थे। और कांग्रेस की लीडरशिप में जो दलित थे और मुसलमान थे उनको आमतौर पर महत्व नहीं दिया जाता था। इन 'ऊंची' जाति के लोगों का आरएसएस के प्रति एक सामाजिक रिश्ता भी था क्योंकि वे 'ऊंची' जाति के लोग थे। लेकिन 'ऊंची' जाति का होने पर भी कई नेता लड़े उनसे। जैसे नेहरू। उसके बाद उत्तर प्रदेश जो उस समय संयुक्त प्रांत हुआ करता था में तब गोविन्द सहाय एक व्यक्ति थे। कांग्रेस की पहली मंत्रीपरिषद में पार्लियामेंटरी सदस्य हुए थे। अगर कांग्रेस वाले उनकी लिखी हुई पांच छोटी–छोटी किताबें पढ़ लें। आरएसएस और फासीवाद आदि। कमाल की किताबें हैं। मुझे भी जो प्रेरणा मिली कि मैं भी छोटी–छोटी किताबें लिखूं उसे ही पढ़कर मिली। कांग्रेस का कोई नहीं जानता है कि आरएसएस कैसे फासीवादी है, कैसे उसके खिलाफ है, गांधी की हत्या कराने में उनकी भूमिका है, गांधी के खिलाफ कैसे जहर फैलाया और उनके खिलाफ कार्टून छपवाया था। लेकिन कांग्रेस में ज्यादा वे लोग थे जो कम्प्रोमाइज करते थे। जैसेः पंत जी; राम लला जो प्रगट हुए वो तो उन्होंने ही करवाया था। 1950 में तो ऐसे बहुत लोग थे। गुलजारी लाल नंदा थे। लेकिन उस दौर में कांग्रेस संघर्ष भी करती रही है। जैसे नेहरू। और गांधी जी ने तो उसकी कीमत भी चुकायी थी। अपनी जान देकर। तो ये ऐसा नहीं है कि एक ही तरीके से चल रहा था। कांग्रेस ने सन् 1931 में ही फैसला कर लिया था कि कोई भी जो कांग्रेस का मेम्बर होगा वह हिन्दू महासभा या आरएसएस का मेम्बर नहीं होगा। लेकिन उसकी बहुत अवहेलना होती रही।

कृपा शंकर–हिन्दुत्व फासीवाद के निशाने पर मुख्यतः मुस्लिम और दलित माने जाते हैं। लेकिन हिन्दुत्व फासीवाद के निशाने पर एक और तबका भी है। और वह है आदिवासी। विशेशकर झारखण्ड और छत्तीसगढ़ में अपने अधिकारों के लिए लड़ रहा आदिवासी। लेकिन विडम्बना यह है कि इसके साथ फासीवाद जो क्रूर सलूक कर रहा है, हमारे बौद्धिक जगत में उसे प्रायः नोटिस में नहीं लिया जाता। अभी गढ़चिरौली में 42 लोंगो का जो नरसंहार हुआ है, उसके खिलाफ इतना सन्नाटा क्यों है। 'सीडीआरओ' और 'डब्ल्यूएसएस' की रिपोर्ट भी अब आ गयी है और यह साफ हो गया है कि उनमें से ज्यादातर आम आदिवासी थे। और माओवादी भी थे तो उनका भी तो मानव अधिकार है। इसे आप कैसे देखते हैं? कहीं हम दलित और मुस्लिम विमर्श के चक्कर में मजदूरों–किसानों–आदिवासियों को भूल तो नहीं रहे हैं जो फासीवाद से आज सबसे ज्यादा पीड़ित है।

शमशुल इस्लाम–इसमें मैं दो बात कहना चाहता हूं। एक जो हमारे आदिवासी हैं जो खनिज सम्पदाओं के गढ़ में बैठे हैं। वे जंगल पर अपना अधिकार मांग रहे हैं पानी पर अधिकार मांग रहे हैं। उनके ऊपर दमन तो हिन्दुत्व के पहले भी था। क्योंकि कारपोरेटों को तो खनिज सम्पदा और जंगल की जमीन चाहिए। परंतु दूसरी बात जो हमारी निगाह से और बौद्धिक जगत से गायब है कि हिन्दुत्व का असली निशाना जो दिख रहा है कि मुस्लिम और इसाई हैं। परंतु उनके असली निशाने तो हिन्दु के समाज के ही वे तबके हैं जो बराबरी का हक मांग कर रहे हैं। वे हैं औरतें, शूद्र जिनको हम कहते हैं–अनटचेबुल, को तो छोड़ दीजिए। मनु तो इन्सान ही नहीं मानता शुद्रों को । लेकिन जो इस वर्ण सिस्टम से बाहर हैं जिनको हम अनटचेबुल कहते हैं उनकी तो पूछिये मत। मनु स्मिृति वह कानून है जो आप जानते है ना कि वह इसाईयों के खिलाफ नहीं है, वह मुस्लिमों के खिलाफ नहीं है, बल्कि वह गांव जंगल में रहने वाले लोग, शुद्र के खिलाफ है। उनका असली निशाना वे हैं जो उनके हेजेमनी में नहीं आ रहे हैं। उनकी दादागिरी, उनके झण्डे तले नहीं आ रहे हैं। उन्हें डराने के लिए वे दिखा रहे हैं कि वह देखो इसाई आ रहे हैं, मुस्लिम आ रहे हैं जो अगले 25 सालों मे पूरे देश को मुसलमान बना देंगे, 50 साल में इसाई बना देंगे। जबकि वो इसाई जिनकी संख्या घटती चली जा रही है। वो मुसलमान, जब 800–1100 सालों तक मुसलमान नाम का राजा होता था, तब तो कभी 30 प्रतिशत से अधिक बढ़ा नहीं। सावरकर ने कभी कह दिया, 1915–20 के अंदर कि मुसलमान पूरे देश पर छा जायेंगे। तो आज भी कहा जाता है कि इतने दिनों में मुसलमान बहुमत में हो जाएंगे। यानी मुसलमान जो 1100 साल में बहुमत में नहीं हुए। सारे सम्पत्ति पर कब्जा, उनके दरबारों की नौकरियां, उनकी बीवियां हिन्दू उंची जातियों के हाथों में था। हुमायुं के बाद कोई भी मुगल राजा मुसलमान औरत से नहीं हुआ। सभी रानियां उंची जाति के हिन्दुओं के घर से रहीं। मुसलमानों के 800–1100 सालों के राज में भी मुसलमान कमेरे ही रहे। किसी भी

शहर में चले जाइये किसी मेन मार्केट में मुसलमानों–दलितों की दुकान दिखा दीजिए। 800 साल तक मुसलमानों का शासन रहा उसके बाद 200–पौने 200 साल अंग्रेजों का राज रहा तो देश पर मुसलमानों–इसाईयों का कब्जा हो जाना चाहिए था। परंतु वे अल्पमत में रहे, सारे कमेरे रहे और हैं। उनका असली निशाना तो हिन्दू समाज में बराबरी का हक मांग रहे लोगों, तबकों को दबाना है।

कृपा शंकर–आप लोगों ने 1971में 'निशांत नाट्य मंच' की स्थापना की थी। निश्चित रूप से उस समय आप लोग नक्सलवाद–वियतनाम युद्ध–ब्लैक पैंथर आदि से प्रभावित रहे होंगे। कृपया उस समय के दौर के बारे में कुछ बताइये और 'निशांत नाट्य मंच' के शुरूआती कामों–प्रदर्शनों पर थोड़ा प्रकाश डालिये।

शमसुल इस्लाम–ऐसा है कि उस समय साम्राज्यवाद पर संकट आया हुआ था। वह युद्ध के माध्यम से दुनिया पर कण्ट्रोल कर रहा था। वियतनाम की जनता ने बताया ये सब चलेगा नहीं। कारपेट बाम्बिंग उस जमाने में शब्द चला था कि आप एक–एक इंच पर बम गिराते चले जा रहे हैं। कैसे लड़े वे भूखे–नंगे लोग। उसके बाद जब संकट आया। सेना में भर्ती होने का आया कि सब भर्ती हों। देखिये जंग जो होता है न वो वेस्टेज होता है। एक–एक बम 5 लाख–10 लाख रुपये का कुछ पैदा नहीं करता है। पूंजीवाद को संकट आना ही था। तब अमरीकन विश्वविद्यालय के छात्रों ने संघर्ष किया था। तब एनएसडी आया था। दम–मारो–दम, मस्ती करो, हिप्पी बनो। हिप्पी बनना भी उनका एक तरह का विरोध था, प्रतिरोध था। जब पॉजिटिव व संगठित प्रतिरोध नहीं होते हैं तो इस तरह के प्रतिरोध होते हैं। हमारे यहां भी नक्सलबाड़ी का उभार आया जिसे आना ही था। उसका एक लोकल कारण था कि 1947 में जो वायदे किये गये थे। वे वायदे सारे खत्म हो गये थे। और उसी समय के अन्दर देखिये क्या–क्या होता है, नई कविता आयी, नई कहानी आयी, नया नाटक भी आया। वह नया नाटक था–नुक्कड़ नाटक, पोलिटिकल नाटक। वह मंच पर भी होता था। छंद मुक्त कविता भी आयी। उसमें एक रिबेलियन था।

कृपा शंकर–उस समय आप लोगों के काम, निशांत नाट्य मंच के काम के बारे में बताइये।

शमसुल इस्लाम–उस समय मैं बी.ए(आनर्स) में था। मैं कम्युनिस्ट लोगों के संपर्क में आ गया था। हम काम करते रहे थे। उस समय जो नया विपक्ष आया उसमें भी बहस की गुंजाइश नहीं थी। हमारे बहुत से साथी निराश हुए थे। उसके बाद नुक्कड़ नाटक करने का तय किया। इमरजेंसी के समय जो मुक्ति संगठन बना था। उसमें कई एमएल के साथी थे। उनके बीच बहस चलता रहता था। कम्युनिस्टों में बहत–मुबाहिसा कोई बुरी बात नहीं होती। यह साइंस है, कोई वेद–पुराण नहीं है। इमरजेंसी के दौरान हम लोगों ने अण्डर ग्राउण्ड नाटक किया, छापामार नाटक किया। इसकी एक अलग कहानी है। सब्जी वाले के सामने हम बेचने वाले, खरीदने वाले बन जाते थे। खुफिया वाले, पुलिस वाले समझते थे कि ये सब्जी बेचने वाले खरीदने वाले का झगड़ा है पर वह मंहगाई के खिलाफ नुक्कड़ नाटक होता था। और हम आगे निकल जाते थे। फिर निशांत बन गया। जब इन्दिरा गांधी ने चुनाव की घोषणा की तब 1977 में भगत सिंह के जयंती के अवसर पर सितम्बर में। हमने काम किया। उसी समय मैंने अपने साथी नीलिमा शर्मा से स्पेशल मैरिज एक्ट के तहत अन्तर धार्मिक शादी कर लिया जो चल रहा है। आपके सामने बैठा हूं। कभी अपने रास्ते से, काम से निराशा का सवाल नहीं आया। जैसा भी है अपना यह रिवोल्यूशन का काम चल रहा है। इसे कामन सेंस के साथ जोड़ना चाहिए। पढ़ते–लिखते रहना चाहिए। जो फार्मूला भी है मार्क्सवाद के रूप में उसे प्रेक्टिस की सान पर रगड़ते रहना चाहिए, उसे पक्का करते रहना चाहिए। दुनिया बदलेगी हम नहीं रहेंगे तब भी दुनिया बदलेगी। हमारे जीवन में रिवोल्यूशन आये जरूरी नहीं। पर हम अपना काम पूरा करके जायें बाकी आने वाली पीढ़ी पूरा करेगी। हम आपको बताना चाहते हैं। मार्क्स ने कहा था। हमारे आगे आने वाली पीढ़ी आयेगी और वो हमें गलत साबित करेगी और वो सही होगी। हमारे पास मार्क्सवाद का दर्शन है। मार्क्स, एंगेल्स, लेनिन, स्तालिन, माओ कोई खुदा नहीं हैं वे अपने समय के हिसाब से काम करके गये। हमने उनके सबक से सीखा। जितना सर्जन कर सकते हैं रिवोल्यूशन के काम में यह हमारी जीत है और जितना सृजन नहीं करेंगे वह हार है।

कृपा शंकर–आज की परिस्थिति उस समय से भी ज्यादा बूरी है। परन्तु नुक्कड़ नाटक के फार्म का इस्तेमाल कोई संगठन भी नहीं कर पा रहा है।

शमसुल इस्लाम–परिस्थिति बहुत बूरी है। परन्तु वजह यह है कि हमने, जनता ने बहुत थपेड़े खाये हैं। शासक वर्गों ने बहुत गद्दारी की है। हमने बहुत कुर्बानी दी है। आजादी की लड़ायी, प्लासी के युद्ध के बाद से हुई कुर्बानियों में जितना कम्युनिस्टों ने व जितना नक्सलबाड़ी के झण्डा उठाये कैडरों ने कुर्बानी दी है, किसी ने नहीं दी है। आज इमरजेंसी के मामले में किस पर चर्चा हो रही है कि अटल बिहारी ने, आरएसएस ने कितनी कुर्बानी दी थी। सैकड़ों की तादाद में नक्सल कैडर फेक इन्काउण्टर में मार दिये गये, हजारों–हजारों बस्तियां शहरों से उजाड़ दी गयीं। लाखों कमेरों को उजाड़ कर 40–40 किलोमीटर दूर फेंक दिया गया जहां न पानी था न रोजगार था। नसबन्दी के नाम पर सैकड़ों का बुचड़ किया गया उस पर कहीं कोई चर्चा नहीं हो रहा है। शासकवर्ग इसमें माहिर है। मीडिया आज भोंपू बन गया है। ऐसे में हमें और अच्छे से करना है। नुक्कड़ नाटक का महत्व है। परन्तु आज हम सोशल मीडिया का अच्छे से इस्तेमाल कर ले रहे हैं। उस समय जब रेडियो, टी.वी. था। तब हम उसका इस्तेमाल नहीं कर सकते थे। आज पूंजीवाद ने अपने फायदे के लिए ही सही दुनिया को मुट्ठी में करने के लिए इण्टरनेट ला दिया है। तो उसका इस्तेमाल कम्युनिस्ट भी अच्छे से कर ले रहे हैं। नुक्कड़ नाटक के पीछे जाने का एक कारण यह भी था कि उस समय इसमें मध्यम वर्ग के ज्यादे लोग आये थे, और वे डिक्लास नहीं हो पाये थे। जब नवउदारवाद का हमला हुआ, यह कहा जाने लगा कि 'There is no Alternative(TINA)' तो ये मध्यम वर्गीय लोग एनजीओ बन गये। आज नुक्कड़ नाटक के साथ–साथ लोक गायन परम्परा पर ध्यान देने की जरूरत है। हमारे यहां सामंतवाद, साम्राज्यवाद के खिलाफ संघर्ष में लोक गायन की जबरदस्त परम्परा रही है। हमारे यहां विरोधी गायन की परम्परा रही है जो श्वांग थे, उकापताता, बुरापताली, जात्रा जो सारे थे ये जनता के सवाल को उठाते थे। ये राजदरबार में नहीं हो सकते थे। ये बाहर ही जनता के बीच होते थे। हमें उन मण्डलियों को दुबारा करना चाहिए। यह जनता का सबसे प्रभावशाली माध्यम रहा है और हो सकता है।

कृपा शंकर–आपने कहीं पर जर्मनी में फासीवाद के दौरान बुद्धिजीवियों की भूमिका पर एक किताब 'हिटलर्स प्रोफेसर' का जिक्र किया था और उसे पढ़ने की सलाह दी थी। हमने अपने अखबार 'विरुद्ध' में भी इससे सम्बन्धित एक फिल्म 'मेफिस्टो' की समीक्षा छापी है। आप आज भारत के संदर्भ में 'हिटलर्स प्रोफेसरों' और 'मेफिस्टो' को कैसे देखते हैं?

शमसुल इस्लाम–बहुत हैं। हिटलर के जो सारे 'ब्लैक शर्ट्स' थे, उसके सारे 'ब्राउन शर्ट्स' थे, और वो जिनसे उसको कम्युनिस्टों–ज्यूसों जिनकी उसे कत्लेआम कराना था, से हिटलर ने कहा कि हमने अब यूनिवर्सिटी पर कब्जा कर लिया है, इसका मतलब है कि हमने पूरे जर्मनी पर कब्जा कर लिया है। एक यहूदी इन्टेलेक्चुअल हैं जिन्होंने सिरीज निकाली है–'हिटलर स्पीच्स', 'हिटलर डॉक्टर्स', 'हिटलर प्रोफेसर्स'। मैंने बड़ी मुश्किल से हासिल किया है। ये अंग्रेजी में हैं। मैं आपको भेज दूंगा, आप मुझे याद दिलायेंगे तो फोटोस्टेट कराकर भेज दूंगा। पढ़ने लायक किताबें हैं। जैसे आज यूनिवर्सिटी में हिटलर मोदी के गुण्डे दंगे कर रहे हैं, ऐसा लगता है हमारे देश को देखकर ही वो किताबें लिखी गयी हैं, कैसे उस जमाने के पोप ने हिटलर को कत्लेआम करने के लिए बाइबिल से कोट देकर बताया था कि यहां यह लिखा है, यहां यह। बेहतरीन किताबें हैं।

कृपा शंकर–1990 के बाद साम्प्रदायिक फासीवाद के उभार को रोकने या उसका वीभत्स चेहरा दिखाने का काम हमारे कलाकारों–संस्कृतिकर्मियों ने काफी हद तक किया है। 'आनन्द पटवर्धन' और 'सईद मिर्जा' जैसे लोंगो ने बेहतरीन फिल्में बनायी। (आनन्द पटवर्धन की 'राम के नाम' और सईद मिर्जा की 'नसीम' और 'सलीम लंगड़े पे मत रो' प्रमुख हैं) काफी असरकारक कविताएं, नज्म और कहानियां लिखीं गयीं। लेकिन आज इस तरह का प्रयास कम नजर आता है। कहीं यह 'न्यू नार्मल' की भेंट तो नहीं चढ़ गया। आप इसे कैसे देखते हैं।

शमसुल इस्लाम–नहीं। हां, देखिये न सत्ता पक्ष का झूठ बहुत ज्यादा दिन चलना है। क्योंकि उसने मीडिया पर पूरा कब्जा किया है। ये सब काम इतना महंगा है कि अब नये सईद मिर्जा, आनन्द पटवर्धन, श्याम बेनेगल, सैथ्यू जैसे लोग अब पैदा नहीं हो रहे हैं। यह सच है। बहुत नुकसान हो रहा है। परन्तु फासीवाद और उसके गिरोह के विरुद्ध चेतना आमतौर पर विकसित हुई है। पहले जो सेक्युलर लोगों और प्रोग्रेसिव लोगों में द्वन्द्व चलता था उसकी समझ अब आम लोगों में बनी है। यानी हिन्दुत्व का फासीवादी चेहरा आम लोगों में क्लियर हुआ है। लेकिन आप यह सही कह रहे हैं कि क्रिएटिव आर्ट्स में वो सृजनात्मकता, सृजनात्मक कला में वह चुनौती नहीं लिया गया है। हालांकि सोशल मीडिया पर खूब चल रहा है, भयानक चल रहा है। इस समय दुनिया भर में जिसकी सबसे ज्यादा हंसी उड़ायी जा रही है, जिसे सबसे ज्यादा गाली दी जा रही है वह हमारे यहां का प्रधानमंत्री है मोदी।

सम्पादकीय का शेष

ढावले, सुरेन्द्र गाडलिंग, महेश राउत, रोना विल्सन, सोमा सेन और अब सुधा भारद्वाज, गौतम नवलखा, वी वी राव, वर्नन गोंजाल्विस , अरुण फरेरा तो प्रतीक हैं।

परंतु देशभर के मजदूरों–किसानों से लेकर बड़े–बड़े लेखकों, वकीलों, मानवअधिकार कार्यकर्ताओं, प्रोफेसरों, विद्यार्थियों–नौजवानों ने मोदी सरकार के फासिस्ट हमलों का एकजुट प्रतिरोध का मिशाल पेश किया है। ''किस–किस को कैद करोगे'' के बैनर तले 3 अगस्त को संसद मार्ग, नई दिल्ली में सभा हुई थी। उसके बाद तो दिल्ली से लेकर देशभर में प्रतिरोधों की बाढ़ सी आई हुई है। यही दमन व प्रतिरोध फासीवादी शोषण–दमन के सभी रूपों के खात्मे व जन विकल्प को

–x–x–x–x–x–x–x–x–x–x–x–x–x–x–x–x–x–x–x–x–x–x–x–x–x–x–x–x–x–x–x–x–

★ अलीगढ़ में पुलिस द्वारा मीडिया बुलाकर दो नौजवानों को नौशाद पुत्र राशिद व मुस्तकीम पुत्र इरफान का लाइव इन्काउण्टर करके मार दिया गया। जबकि इन दोनों नौजवानों को 16 को उठाया गया था 18 को इनाम घोषित किया गया था और 20 सितम्बर को मार दिया गया था। रिहाई मंच उत्तर प्रदेश ने इस इन्काउण्टर पर सवाल उठाते हुए डी.जी. पी. को पत्र भेजा है। फासीवाद विरोधी मोर्चा योगी सरकार के इस फासीवादी कृत्य की तीव्र निन्दा करता है और इसके निष्पक्ष जाँच की माँग करता है।

★ पिछले हफ्ते दिल्ली में सेप्टिक टैंक की सफाई करते हुए 6 नौजवानों की मौत हो गयी उसके बाद छत्तीसगढ़ के जशपुर में मकान मालकिन सहित पाँच लोगो की मौत सेप्टिक टैंक में हो गयी। मोदी के खुले में शौच मुक्त भारत के अभियान के बावजूद आज तक भारत का एक भी शहर या कस्बा सेप्टिक टैंको के की सफाई के मामले में मैनुअल तरीके से मुक्त नहीं हो पाया है। यह किसी के एजेण्डे पर भी नहीं है। पूरे देश में 2014 में सुप्रिम कोर्ट के आदेश के बाद 1000 से ज्यादा लोग इस काम में मर चुके हैं। जबकि टैंकों की सफाई के लिए मशीनें बन चुकी हैं। परंतु कोई सरकार इसमें रूचि नहीं लेती। फासीवाद विरोधी मोर्चा की संवेदना इन शोक संतप्त परिवारों के साथ है।

– कृपा शंकर

ग्रेट डिक्टेटर फिल्म में चार्ली चैपलिन का भाषण

अनुवाद – आबिदा

हां.....यह कहते हुए मुझे दुख हो रहा है लेकिन मैं सम्राट नहीं होना चाहता– यह मेरा काम नहीं– मैं किसी पर शासन नहीं करना चाहता या किसी को जीतना नहीं चाहता। मैं यथासम्भव हर किसी की मदद करना चाहता हूं– चाहे वह यहूदी हो या गैर यहूदी, काला हो या गोरा। हम सभी एक दूसरे की मदद करना चाहते हैं। इंसान ऐसे ही होते हैं।

हम सभी एक दूसरे की खुशी के लिए जीना चाहते हैं न कि एक दूसरे की तकलीफों के लिए। हम एक दूसरे को घृणा या नफ़रत नहीं करना चाहते। इस संसार में सभी के लिए जगह है। धरती समृद्ध है और यह सभी को सब कुछ मुहैया करा सकती है।

जीवन जीने का सलीका स्वतन्त्र और खूबसूरत हो सकता है।

लेकिन हमने वह सलीका खो दिया है।

लालच ने इंसान की आत्मा को ज़हरीला बना दिया है– इसने संसार को नफ़रत से भर दिया है। हमें दुखों और खूनखराबे की ओर ढकेल दिया है।

हमने अपनी चाल बढ़ा ली है लेकिन हमने स्वयं को बन्द कर लिया है: वह मशीनरी जो हमें बहुत ज़्यादा प्रदान करती है, उसने हमें हमारी इच्छाओं में छोड़ दिया है। हमारे ज्ञान ने हमें सनकी बना दिया है। हमारी चतुराई कठोर और निर्मम है। हम बहुत अधिक सोचते हैं लेकिन बहुत कम अहसास करते हैं। हमें मशीनरी से अधिक मानवता की ज़रूरत है। चतुराई से अधिक हमें दयालुता और भलाई की ज़रूरत है। इन गुणों के बगैर जीवन हिंसक हो जाएगा और सभी कुछ लुप्त हो जाएगा।

हवाई जहाज और रेडियो ने हमें नज़दीक ला दिया है। इन अविष्कारों का मूल भाव इंसान में अच्छाई लाना है, वैश्विक भाईचारा और सभी के लिए एकता लाना है। अभी भी जब मेरी आवाज़ समूची दुनिया में लाखों लोगों तक पहुंच रही है, लाखों निराश औरत पुरुष और छोटे बच्चे एक ऐसी व्यवस्था के शिकार हैं जो लोगों को यातना देती है, निर्दोष लोगों को जेल में डालती है। जो लोग मुझे सुन सकते हैं उनके लिए मैं कहूंगा ''निराश न हों''।

आज हमारे ऊपर जो दुख आन पड़ा है, और कुछ नहीं बल्कि लालच और उन इंसानों की कड़ुवाहट का सिलसिला है जो मानवता की प्रगति से खौफ खाते हैं। इंसान की घृणा खत्म हो जाएगी और तानाशाह की मौत हो जाएगी और जो सत्ता उन्होंने जनता से ले ली है, वह जनता के पास वापस आ जाएगी। जब तक इंसानियत जिन्दा है, स्वतन्त्रता कभी नष्ट नहीं होगी।

सैनिकों– क्या तुम अपने आपको नीचों को नहीं सौंप दे रहे हो, ऐसे लोगों को जो तुम्हारा तिरस्कार करते हैं, तुम्हें गुलाम बनाते हैं– जो तुम्हारे जीवन को तय करते हैं, तुम्हें बताते हैं कि क्या करो, क्या सोचो और क्या महसूस करो, जो तुमसे ड्रिल कराते हैं, तुम्हें भूखा रखते हैं, तुमसे जानवरों की तरह, एक तोप के चारे की तरह बर्ताव करते है।

क्या तुम अपने आपको इन अप्राकृतिक लोगों और मशीनी लोगों के हवाले नहीं कर दे रहे, जिनके मशीनी दिमाग हैं और मशीनी कलेजे हैं। तुम घृणा नहीं करो–केवल घृणा से नफ़रत करो। केवल अप्राकृतिक चीज़ को नफ़रत करो। सैनिकों गुलामी के लिए मत लड़ो, स्वतन्त्रता के लिए लड़ो।

सत्रहवें अध्याय में संत ल्यूक ने लिखा है ''ईश्वर का साम्राज्य इंसान के भीतर होता है'' – एक व्यक्ति के भीतर नहीं– व्यक्तियों के एक समूह में नहीं – बल्कि सभी इंसानों में होता है–तुममें होता है, जनता में होता है।

आप जनता के पास ताकत होती है, मशीनों को निर्मित करने की ताकत, खुशियों को निर्मित करने की ताकत। आप जनता के पास जीवन को मुक्त करने और खूबसूरत बनाने की ताकत है। जीवन को एक अद्भुत दुस्साहस में बदल देने की ताकत। तो लोकतन्त्र के नाम पर आइये, उस ताकत का इस्तेमाल करें– आइये, हम सभी एक हो जाएं। आइये, एक नई दुनिया के लिए लड़ें, एक ऐसी अच्छी दुनिया जो सभी को काम का मौका देगी। जो आपको एक भविष्य, बुढ़ापा और सुरक्षा देगी। इन चीज़ों का वादा करके निर्दयी लोग सत्ता में आ गए। लेकिन वे झूठ बोलते हैं। वे अपने वादे को पूरा नहीं करते, वे कभी करेंगे भी नहीं। तानाशाह स्वयं को स्वतन्त्र कर लेते हैं लेकिन वे जनता को गुलाम बना लेते हैं। अब आइये, हम उस वादे को पूरा करने के लिए लड़ें। आइये, दुनिया को मुक्त करने के लिए लड़ें, राष्ट्रीय बाधाओं को उखाड़ फेकें, लालच को उखाड़ फेकें, घृणा और असहिष्णुता को उखाड़ फेकें। आइये, एक तर्कसंगत दुनिया के लिए लड़ें। एक ऐसी दुनिया जहां। विज्ञान और प्रगति इंसान की सारी खुशियों को रास्ता दिखाएगी।

सैनिक– लोकतन्त्र के नाम पर आओ सब एक हों!

वो देखो! वो देखो! बादल छंट रहे हैं– सूरज निकल रहा है। हम अंधियारे से उजाले की ओर बढ़ रहे हैं। हम एक नयी दुनिया में प्रवेश कर रहे हैं। एक ऐसी नई उदार दुनिया में जहां इंसान अपनी घृणा और नृशंसता से ऊपर उठेगा।

इंसान की आत्मा को पंख लगे हैं– और अन्ततः वह उड़ने को तैयार है। वह इन्द्रधनुष की ओर उड़ रहा है– उम्मीदों की किरण की ओर उड़ रहा है– भविष्य की ओर उड़ रहा है। वह गौरवशाली भविष्य तुम्हारा है, मेरा है और हम सबका है. वो देखो! वो देखो!!

ईरानी कविता

दोस्ती

– साबीर हका

मैं(ईश्वर) का दोस्त नहीं हूं
इसका सिर्फ एक ही कारण है
जिसकी जड़ें बहुत पुराने अतीत में हैं
जब छह लोगों का हमारा परिवार
एक तंग कमरे में रहता था

और (ईश्वर) के पास बहुत बड़ा मकान था
जिसमें वह अकेले ही रहता था

इकलौता डर

जब मैं मरूंगा
अपने साथ अपनी सारी प्रिय किताबों को ले जाऊंगा
अपनी कब्र को भर दूंगा
उन लोगों की तस्वीरों से जिनसे मैंने प्यार किया.
मेर नये घर में कोई जगह नहीं होगी
भविष्य के प्रति डर के लिए.

मैं लेटा रहूंगा. मैं सिगरेट सुलगाऊंगा
और रोऊंगा उन तमाम औरतों को याद कर
जिन्हें मैं गले लगाना चाहता था.

इन सारी प्रसन्नताओं के बीच भी
एक डर बचा रहता है,
कि एक रोज, भोरे–भोर,
कोई कंधा झिंझोड़कर जगाएगा मुझे और बोलेगा –
अबे उठ जा सबीर, काम पे चलना है

आस्था

मेरे पिता मजदूर थे
आस्था से भरे हुए इंसान
जब भी वह नमाज पढ़ते थे
(अल्लाह) उनके हाथों को देख
शर्मिंदा हो जाता था.

पाठकों से अपील

आप सभी पाठकों से गुजारिश है कि हमलोगों ने बहुत ही सीमित संसाधन के साथ फासीवाद विरोधी मोर्चा के मुखपत्र के रूप में "फासीवाद और हर तरह के शोषण–दमन के **विरुद्ध** "का सम्पादन शुरू किया है। इसकी निरन्तरता के लिए आप सबके सुझाव व आर्थिक सहयोग की अत्यन्त आवश्यकता है। इसलिए अधिक से अधिक संख्या में इसकी सदस्यता ग्रहण करें।

न्यूनतम वार्षिक सहयोग
50 रू डाक खर्च सहित

श्रद्धांजलि

सामिर अमीन (3 सितम्बर,1931–12 अगस्त,2018)

सामिर अमीन का जन्म मिश्र के काहिरा में 3 सितम्बर, 1931 को हुआ था। उनकी प्रारम्भिक शिक्षा मिश्र में प्रचलित फ्रांसीसी शिक्षा प्रणाली के तहत हुई थी और उच्च शिक्षा फ्रांस में। वे 1957–1960 तक मिश्र में प्लानिंग एजेंसियों से जुड़े रहे थे। परंतु नासिर की सरकार ने जब कम्युनिश्टों पर हमला बोला तो वे मिश्र छोड़ दिये थे। वे फ्रांसीसी कम्युनिश्ट पार्टी से जुड़े परंतु बाद में माओवादी समूहों के हिस्सा हो गये थे। वे प्रसिद्ध मार्क्सवादी अर्थशास्त्री थे। सामिर अमीन आजीवन अमरीकी प्रभुत्व विशेषकर हर इलाके में सैन्य हस्तक्षेप के खिलाफ संघर्षरत रहे। 2018 में साम्राज्यवाद के वर्तमान स्वरुप और वित्तीय पूंजी के जरिये लूटतंत्र पर लिखी उनकी किताब चर्चा में रही। उन्होंने अमरीकी साम्राज्यवाद के प्रचारों का हमेशा खण्डन किया और आज के दौर को समझने हेतु महत्वपूर्ण लेख भी मंथली रिव्यू में लिखते रहे। लिबरल वायरस , कैपिटलिज्म इन द एज ऑफ ग्लोबलाइजेशन , एक्यूमुलेशन ऑन ए वर्ल्ड स्केल इत्यादि महत्वपूर्ण किताबें आज के पूंजीवादी–साम्राज्यवादी अर्थव्यवस्था की पोल खोलने के लिए सामिर अमीन ने लिखा। उन्होंने तालिबानी, ब्रदरहुड जैसे इस्लामी मिलिटेंसी को पोलिटिकल इस्लाम की संज्ञा दिया। यह कोई इस्लाम धर्म नहीं है बल्कि एक राजनीति है। इसी संदर्भ में हमारे देश के हिन्दुत्व को समझ सकते हैं। हिन्दुत्व विशुद्ध रुप से एक राजनीति है। इसका हिन्दू धर्म से कोई लेना देना नहीं है। हम उनसे प्रेरणा लेने के संकल्प के साथ उन्हें श्रद्धांजलि और लाल सलाम पेश करते हैं।

कुलदीप नैयर (14 अगस्त,1923–23 अगस्त,2018)

कुलदीप नैयर का जन्म 14 अगस्त,1923 को सियालकोट (अब पाकिस्तान) में हुआ था। वे बिना किसी अन्तराल और थकान के जीवन पर्यंत प्रेस की आजादी, मानव अधिकारों के खिलाफ लड़ते रहे। वे राज्यसभा के सदस्य रहे, राजदूत रहे , पत्रकार रहे, नागरिक अधिकार कार्यकर्ता रहे। वे जेलों में बंद पाकिस्तानी बंदियों और उल्फा बंदियों सहित आम बंदियों के अधिकारों के लिए काम किये थे।

उन्होंने युवाकाल से ही स्वतंत्रता संघर्ष की चुनौतियों को देखा था और विभाजन के दर्द को भी झेला था। इंसान की आजादी और भाईचारे के प्रति उनकी संवेदना ने उन्हें कानून की डिग्री के बाद वकालत की बजाय जनता को समर्पित पत्रकार बनने का रास्ता दिखाया। एक पत्रकार के रुप में उन्होंने इंसानों के बीच नफरत फैलाने वाली हर कार्यवाही का विरोध किया और मानव अधिकारों के पक्ष में हमेशा खड़े रहे। उन्होंने भारत–पाकिस्तान विभाजन और दोनों देशों के बीच नफरत फैलाने वाले विचारों का हमेशा विरोध किया। 1971 में बांग्लादेश की जनता के पक्ष में खड़े रहे। 1975 में इन्दिरा सरकार के विरोध के कारण उन्हें जेल भी जाना पड़ा था। 1984 में सिक्खों के नरसंहार, 6 दिसम्बर,1992 को बाबरी विध्वंश और 2002 में गुजरात में हुए मुस्लिमों के नरसंहार के खिलाफ भी वे हमेशा आवाज उठाते रहे। जनतंत्र के प्रति हमेशा उनकी पक्षधरता को "बिट्वीन द लाइन्स" नामक शीर्षक के तहत उनके लेखों में देखा जा सकता है। उन्होंने पाकिस्तान के तरफ दोस्ती का हाथ बढ़ाने वालों का हमेशा समर्थन किया और स्थापित किया कि देशभक्ति का मतलब पाक से नफरत नहीं है। इस महान विभूति का 23 अगस्त, 2018 को दिल्ली में निधन हो गया। हम कुलदीप नैयर को श्रद्धांजलि अर्पित करते हैं।